ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलुगू, कन्नड़, अंग्रेजी, सिंधी व बंग्ला भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : २१ अंक : ०१
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २२३)
१ जुलाई २०११ मूल्य : रु. ६-००
आषाढ़-श्रावण वि.सं. २०६८

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रिज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद - ३८०००९ (गुजरात).
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

अवधि	हिन्दी व अन्य भाषाएँ	अंग्रेजी भाषा
वार्षिक	रु. ६०/-	रु. ७०/-
द्विवार्षिक	रु. १००/-	रु. १३५/-
पंचवार्षिक	रु. २२५/-	रु. ३२५/-
आजीवन	रु. ५००/-	----

विदेशों में (सभी भाषाएँ)

अवधि	सार्क देश	अन्य देश
वार्षिक	रु. ३००/-	US $ 20
द्विवार्षिक	रु. ६००/-	US $ 40
पंचवार्षिक	रु. १५००/-	US $ 80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुज.). फोन नं. : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org
: www.rishiprasad.org

(१) **सम्पादकीय** ४
✲ ऋषि प्रसाद जयंती
(२) **साधना प्रकाश** ५
✲ विवेकशक्ति बढ़ाने के साधन
(३) **संत-वाणी** ✲ गुरु-महिमा ६
(४) **शास्त्र महिमा** ८
✲ हर घर अमृत पहुँचाओ, हर दिल-दीप जगाओ !
(५) **जीवन पाथेय** १०
✲ परमानंदप्राप्ति का मार्ग
(६) **जीवन पथदर्शन** ११
✲ बड़ों की बड़ाई ✲ नारायण मंत्र
(७) **गुरु प्रसाद** १२
✲ पतितों को भी पावन कर देती है मंत्रदीक्षा
(८) **संत चरित्र** १५
✲ हरि सेवा कृत सौ बरस, गुरु सेवा पल चार...
(९) **प्रसंग माधुरी** १८
✲ परम हितैषी गुरु की वाणी, बिना विचार करे शुभ जानी
(१०) **गुरुकृपा हि केवलं...** १९
✲ आत्मानंदप्राप्ति का सरल उपाय
(११) **एकादशी माहात्म्य** ✲ पुत्रदा एकादशी २०
(१२) **बताओ तो जानें** २१
(१३) **गुरु संदेश** २२
✲ भगवान के भी काम आ जाओ
(१४) **सदाचरण की प्रेरणा** २३
(१५) **जीवन-संजीवनी** २४
(१६) **पर्व मांगल्य** २५
✲ व्यासपूर्णिमा का इतिहास
(१७) **सेवा सुवास** २७
✲ सेवा तो सेवा ही है !
(१८) **एकादशी माहात्म्य** ✲ कामिका एकादशी २८
(१९) **श्रद्धा-भाव** २९
(२०) **स्वास्थ्य अमृत** ३०
✲ स्वास्थ्य के कुछ सरल प्रयोग
(२१) **संस्था समाचार** ३१
(२२) **बापू के बच्चे, नहीं रहते कच्चे !** ३४

विभिन्न चैनलों पर पूज्य बापूजी का सत्संग

A2Z NEWS	Zee JAGRAN	दिशा	संस्कार	care WORLD	सत्संग टी.वी.	Ashram TV LIVE
रोज प्रातः ३, ५-३०, ७-३० बजे, रात्रि १० बजे तथा दोप. २-४० (केवल मंगल, गुरु, शनि)	रोज सुबह ८-४० बजे	रोज दोपहर २-३० बजे	रोज दोपहर २-०० बजे	रोज सुबह ७-०० बजे	रोज रात्रि १०-०० बजे	आश्रम इंटरनेट टीवी २४ घंटे प्रसारण

सजीव प्रसारण के समय नित्य के कार्यक्रम प्रसारित नहीं होते।

✲ **A2Z** चैनल रिलायंस के 'बिग टीवी' (चैनल नं. **425**) तथा 'डिश टीवी' (चैनल नं. **579**) पर भी उपलब्ध है। ✲ **Zee Zagran** चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. **750** ✲ दिशा चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. **757** ✲ **care** WORLD चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. **770** ✲ इंटरनेट पर **www.ashram.org/live** लिंक पर आश्रम इंटरनेट टी.वी. उपलब्ध है।

Opinions expressed in this magazine are not necessarily of the editorial board.Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

पूज्य संत श्री आशारामजी बापू विश्वमानव को एक वरदान के रूप में प्राप्त हुए हैं । आपश्री द्वारा विश्वमानव की सेवा और भारतीय संस्कृति के नवजागरण के कितने ही दैवी कार्य किये जा रहे हैं । 'ऋषि प्रसाद' मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी उसी दिशा में एक सफल कदम है ।

अन्न, जल, वायु एवं प्रकाश का अभाव जैसे शरीर को दुर्बल बना देता है, वैसे ही सत्संग, स्मरण, सेवा, जप, ध्यान, प्रार्थना एवं साक्षीभाव में सजगता के अभाव में हमारा अंतःकरण दुर्बल हो जाता है । जैसे अनुकूल आहार द्वारा शरीर का पोषण जरूरी है, वैसे ही अंतरात्मा का पोषण भी नितांत आवश्यक है । इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु मानवमात्र के लिए पूज्य बापूजी का मधुर प्रसाद है 'ऋषि प्रसाद' । आध्यात्मिक पत्रिकाओं के क्षेत्र में यह पत्रिका आज जन-जन के हृदय को रसमय कर रही है ।

ऋषि प्रसाद का पहला अंक वर्ष १९९० में गुरुपूर्णिमा पर्व पर पूज्य बापूजी के करकमलों द्वारा प्रकाशित हुआ था । यह वह पवित्र दिन है जिस दिन विश्व के पहले आर्ष ग्रंथ 'ब्रह्मसूत्र' का लेखन प्रारम्भ हुआ था । इसी दिन पंचम वेद 'महाभारत' के लेखन का समापन हुआ था । इसी दिन १८ पुराणों, विभिन्न उपपुराणों की रचना और वेदों का विस्तार करके सरल भाषा में जनसाधारण को यह ज्ञान सुलभ करानेवाले भगवान वेदव्यासजी का प्राकट्य हुआ था । और इसी दिन 'ऋषि प्रसाद' रूपी शास्त्रों के साररूप प्रसाद का भी प्राकट्य हुआ था ।

ऋषि प्रसाद पत्रिका आज भारतसहित विश्व के ४७ से अधिक देशों में पहुँच रही है तथा इसकी प्रकाशन संख्या बीस लाख से अधिक हो गयी है । वर्तमान में यह नौ भारतीय भाषाओं के साथ अंग्रेजी में भी प्रकाशित हो रही है । यह निरंतर अभिवृद्धि को प्राप्त होते हुए करोड़ों लोगों के भौतिक ताप मिटा रही है और आध्यात्मिक तृप्ति दे रही है । यह कितने-कितने करोड़ लोगों के जीवन में ज्ञान-प्रकाश फैला रही है, कहना असम्भव है । ऋषि प्रसाद मानवमात्र को जाति, सम्प्रदाय व मान्यताओं के दायरों से परे आध्यात्मिक पूर्णता - आत्मसाक्षात्कार की ओर प्रेरित करनेवाला एक सशक्त माध्यम है । यह जनसामान्य को स्वस्थ, सुखी व सम्मानित जीवन जीने की कला सिखानेवाला दीपस्तम्भ है ।

ऋषि प्रसाद को जन-जन तक पहुँचाने के दैवी कार्य में लगे परोपकारी पुण्यात्माओं की संख्या २६,६०० को पार कर चुकी है । सनातन संस्कृति के प्रचारक ये बड़भागी वीर मान-अपमान, सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास की परवाह किये बगैर घर-घर जाकर लोगों को दिव्य सनातन संस्कृति की महिमा समझाते हैं और उन्हें ऋषि प्रसाद के सदस्य बनाकर इसके ज्ञान से जीवन एवं परिवार को आनंदमय बनाने के लिए प्रेरित करते हैं । ये परदुःखकातर, लोकसेवा-व्रती, समाज-पोषक सेवक प्रति माह व्यक्तिगत रूप से सदस्यों के घर-घर जाकर ऋषि प्रसाद का अंक पहुँचाने की सेवा करते हैं । इस प्रकार ये पुण्यात्मा समाज और संत के बीच सेतु का कार्य कर अपना मनुष्य-जन्म सफल कर रहे हैं ।

पूज्यश्री के आशीर्वाद से गुरुपूर्णिमा का पावन दिवस अब 'ऋषि प्रसाद जयंती' के रूप में भी मनाया जाता है । इस पावन पर्व पर सभी सेवाभावी सज्जनों से निवेदन है कि वे सुख-शांति एवं स्वास्थ्य का संदेश देनेवाली पूज्यश्री के हृदय की वाणी 'ऋषि प्रसाद' को अधिक-से-अधिक लोगों तक पहुँचाने का संकल्प करके अपने सेवारूपी पुष्प से गुरुदेव का पूजन करें । ऐसे सेवाभावी पुण्यात्मा निःसंदेह भाग्यशाली हैं, जो ऋषि प्रसाद के दैवी कार्य में सच्चे हृदय से तन-मन-धन अर्पण करके सेवा का अवसर प्राप्त कर रहे हैं । आइये, हम सब मिलकर पूज्य गुरुदेव के इस सेवाकार्य में किसी-न-किसी रूप में भागीदार होकर इसे आगे बढ़ायें । ❐

विवेकशक्ति बढ़ाने के साधन

(पूज्य बापूजी के सत्संग से)

दस वर्ष की उम्र से लेकर चालीस वर्ष की उम्र तक विवेकशक्ति बढ़ती रहती है। अगर इस उम्र में कोई विवेकशक्ति नहीं बढ़ाता है तो फिर चालीस वर्ष के बाद उसकी विवेकशक्ति क्षीण होती जाती है। जो दस से चालीस वर्ष की उम्र में विवेकशक्ति बढ़ाने की कोशिश करता है उसकी तो यह शक्ति बाद में भी बढ़ती रहती है। ४० वर्ष के बाद भी विवेकशक्ति बढ़ती रहे उसकी एक साधना है। इस साधना को सात विभागों में बाँट सकते हैं। एक तो **सत्संग** सुनता रहे।

बिनु सतसंग बिबेक न होई।

खाने-पीने का, इधर-उधर का, अतिथि-मेहमान का विवेक नहीं; आत्मा क्या है, जगत क्या है और परमात्मा क्या है ? - इस बात का विवेक।

अविनासी आतम अचल, जग तातैं प्रतिकूल।

आत्मा अविनाशी है, हम अविनाशी हैं और जगत विनाशी है। हम शाश्वत हैं, शरीर और जगत नश्वर है - इस प्रकार का प्रखर विवेक। यह सारी साधनाओं का मूल है।

अविनासी आतम अचल, जग तातैं प्रतिकूल।
ऐसो ज्ञान विवेक है, सब साधन को मूल ॥

उसने सब अध्ययन कर लिया, उसने सब पढ़ाई कर ली और सारे अनुष्ठान कर लिये जिसने सांसारिक इच्छाओं का त्याग करके इच्छारहित आत्मा-परमात्मा में आने का ठान लिया - ऐसा तीव्र विवेक ! ईश्वरप्राप्ति के उस तीव्र विवेक को जगाने के लिए ये सात साधन हैं।

दूसरा है **सत्शास्त्रों का अध्ययन।** तीसरा साधन है **प्रातः और संध्या के समय त्रिबंध प्राणायाम करके जप।** भगवद्ध्यान, भगवत्प्राप्ति का जो साधन या मार्गदर्शन गुरु ने दिया है उसका अभ्यास, इससे विवेक जगेगा। चौथा साधन है **कम बोलना, कम खाना और कम सोना, आलस्य छोड़ना।** नींद के लिए तो ४-५ घंटे काफी हैं, आलसी की नाईं पड़े न रहें। अति नींद नहीं, आलस्य नहीं, अति आहार नहीं, अति शब्द-विलास नहीं। पाँचवाँ है **शुद्ध, सात्त्विक भोजन** और छठा सारगर्भित साधन है **ब्रह्मचर्य पालना**, 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' पुस्तक पढ़ना। इसने तो न जाने कितनी उजड़ी बगियाँ गुले-गुलजार कर दी हैं। कई युवक-युवतियों की जिंदगी मृत्यु के कगार से उठाकर बाहर कर दी। आप लोग भी 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' पुस्तक पढ़ना और दूसरों तक पहुँचाने की सेवा खोज लेना। सातवाँ साधन है **सादगी।**

ये सात साधन संसार की चोटों से, मुसीबतों से तो बचायेंगे और आपके जीवन में भगवत्प्राप्ति का दिव्य विवेक भी जगमगा देंगे। ❐

व्रत, पर्व और त्यौहार

१९ जुलाई : मंगलवारी चतुर्थी (१४-४९ तक)
२६ जुलाई : कामिका एकादशी
४ अगस्त : नाग पंचमी, कल्कि जयंती
५ अगस्त : संत तुलसीदास जयंती
९ अगस्त : पुत्रदा एकादशी
१३ अगस्त : रक्षाबंधन (१२-०३ के बाद), नारियली पूर्णिमा, श्रावणी उपाकर्म, संस्कृत दिवस।

गुरु-महिमा

संत कबीरजी ने गुरु की महिमा इन शब्दों में गायी है :

गुरु बिन दाता कोइ नहीं, जग माँगनहारा ।
तीनि लोक ब्रहमंड में, सब के भरतारा ॥
कहै कबीर जाकै मस्तकी भाग ।
सभ परिहरि ताकौं मिलै सुहाग ॥

'इस जग में गुरु के अलावा और कोई दाता नहीं है, सारा जग स्वयं भिखारी है । तीनों लोकों में केवल गुरु ही सबके स्वामी हैं, जो सबको हर चीज दे सकते हैं ।

कबीरजी कहते हैं, जिसके भाग्य में होता है उसीको (गुरुप्राप्ति का) यह अनुपम सौभाग्य मिलता है ।' **– संत कबीरजी**

तार्किक, नास्तिक, विदेशी चकाचौंधवाला इस रहस्य को क्या जाने !

गुरु अज्ञा मानै नहीं, गुरुहि लगावै दोष ।
गुरु निन्दक जग में दुखी, मुए न पावै मोष ॥
सहजो गुरु दीपक दियौ, रोम रोम उजियार ।
तीन लोक दृष्टा भये, मिट्यौ भरम अँधियार ॥

– संत सहजोबाई

बिनु गुर होइ कि ग्यान
ग्यान कि होइ बिराग बिनु ।
गावहिं बेद पुरान
सुख कि लहिअ हरि भगति बिनु ॥

गुरु के बिना कहीं ज्ञान हो सकता है अथवा वैराग्य के बिना कहीं ज्ञान हो सकता है ! इसी तरह वेद और पुराण कहते हैं कि श्रीहरि की भक्ति के बिना क्या सुख मिल सकता है !

बारि मथें घृत होइ बरु सिकता ते बरु तेल ।
बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धांत अपेल ॥

'जल को मथने से भले ही घी उत्पन्न हो जाय और बालू (को पेरने) से भले ही तेल निकल आये परंतु श्रीहरि के भजन बिना संसाररूपी समुद्र से नहीं तरा जा सकता । यह सिद्धांत अटल है ।'

– संत तुलसीदासजी

गुरुसेवने सर्वदुःखे । प्राणी तरन्ति आत्मा सुखे ॥
जे गुरु ज्ञानदान देइ । तांकु जे मनुष्य मणइ ॥
से जेते धर्म करे देहे । निष्फल हस्तीस्नान प्राये ॥

'मनुष्य गुरु की सेवा करने से सब दुःखों से तर जाता है और आत्मसुख पाता है ।

जो ज्ञानदाता गुरु को मनुष्य मानता है, वह शरीर से जितना भी धर्म करता है, उसका फल हाथी के स्नान के समान निष्फल माना जाता है ।'

– श्री जगन्नाथदासजी

कृष्ण यदि कृपा करे कोनो भाग्यवाने ।
गुरु–अन्तर्यामीरूपे शिखाय आपने ॥

'कृष्ण जब किसी भाग्यवान (सुकृतिवान) पर कृपा करते हैं, तब स्वयं गुरुरूप एवं अंतर्यामीरूप से वे शिक्षा देते हैं ।'

(श्री चैतन्य चरितामृत, मध्य लीला : २२.४७)

गुरु कृष्णरूप हन शास्त्रेर प्रमाणे ।
गुरुरूपे कृष्ण कृपा करेन भक्तगणे ॥

'गुरु कृष्ण का ही रूप हैं, यही शास्त्र-वाक्य है । गुरुरूप से ही कृष्ण भक्तों पर कृपा करते हैं ।' **(श्री चैतन्य चरितामृत, आदि लीला : १.४५)**

गुरौ प्रसन्ने प्रसीदति भगवान् हरिः स्वयम् ।

'गुरु जिनके प्रति प्रसन्न होते हैं, श्रीहरि उनके प्रति स्वतः ही प्रसन्न हो जाते हैं ।'

(कल्कि पुराण)

गुरुशुश्रुषणं नाम सर्वधर्मोत्तमोत्तमम् ।
तस्माद् धर्मात् परो धर्मः पवित्रं नैव विद्यते ॥
काम-क्रोधादिकं यद् यदात्मनोऽनिष्ट-कारणम् ।
एतत् सर्वं गुरौ भक्त्या पुरुषो ह्यञ्जसा जयेत् ॥

श्री गुरुदेव की सेवा ही सर्वधर्मोत्तम है । उसकी अपेक्षा श्रेष्ठ धर्म और कुछ भी नहीं है । केवल गुरुसेवा द्वारा ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य, भय, चिंता, दुःख, विषयासक्ति इत्यादि सभी दूर होते हैं एवं भगवान को अनायास ही प्राप्त किया जा सकता है ।

(हरिभक्तिविलास)

सो सद्गुरु मोहि भावै

संतो सो सद्गुरु मोहि भावै,
जो आवागमन मिटावै ।
डोलत डिगे न बोलत बिसरे,
अस उपदेश सुनावै ॥
बिन भ्रम हठ क्रिया से न्यारा,
सहज समाधि लगावै ।
द्वार न रोके पवन न रोके,
ना अनहद उरझावै ॥
ये मन जहाँ जाय तहाँ निर्भय,
समता से ठहरावै ।
कर्म करे और रहे अकर्मी,
ऐसी युक्ति बतावै ॥
सदा आनंद फंद से न्यारा,
भोग में योग सिखावै ।
तज धरती आकाश अधर में,
प्रेम मड़ैया छावै ॥
ज्ञान सरोवर शुन्य शिला पर,
आसन अचल जमावै ।
कहैं कबीर सतगुरु सोइ साँचा,
घट में अलख लखावै ॥
– संत कबीरजी

अंतर्जगत को प्रकाशित कर देते हैं सद्गुरु

राजा वेन को गुरु की महिमा बताते हुए भगवान श्री विष्णुजी कहते हैं : ''राजन् ! गुरु के अनुग्रह से शिष्य को लौकिक आचार-व्यवहार का ज्ञान होता है, विज्ञान की प्राप्ति होती है और वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है ।

सर्वेषामेव लोकानां यथा सूर्यः प्रकाशकः ।
गुरुः प्रकाशकस्तद्वच्छिष्याणां बुद्धिदानतः ॥

'जैसे सूर्य सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करते हैं, उसी प्रकार गुरु शिष्यों को उत्तम बुद्धि देकर उनके अंतर्जगत को प्रकाशपूर्ण बनाते हैं ।'

(पद्म पुराण, भूमि खण्ड : ८५.८)

मुक्त बनो और बनाओ

(पूज्य बापूजी के मधुर सत्संग से)

एक बार मैंने मेरे गुरुजी से कहा : ''गुरुजी ! कोई आज्ञा कर दो, कोई सेवा दे दो ।''

गुरुदेव बोले : ''सेवा करेगा ?''

मैंने कहा : ''हाँ ।''

''मानेगा आज्ञा ?''

मैंने कहा : ''हाँ ।''

मैंने सोचा कि 'गुरुजी कहेंगे कि तुम दो भाई हो तो तुम्हारे हिस्से की सम्पत्ति दे दो, अच्छे काम में लगवा दो, तो लगा देंगे। थोड़ा-सा अपने लिए रखकर बाकी का लगा देंगे ।' गुरुजी को क्या कहना है, यह अनुमान लगा रहे थे । गुरुजी ने फिर से कहा : ''करेगा ?''

मैंने कहा : ''हाँ ।''

गुरुजी : ''तुम जीवन्मुक्त हो जाओ, ब्रह्मज्ञानी बन जाओ और दूसरों को बनाओ बस, यही सेवा है ।''

मैंने कहा : ''ऐ है ! हद कर दी !''

दूसरों को बनाओ - ये दो शब्द उनके हैं तो दूसरे अपने-आप बन रहे हैं । ❐

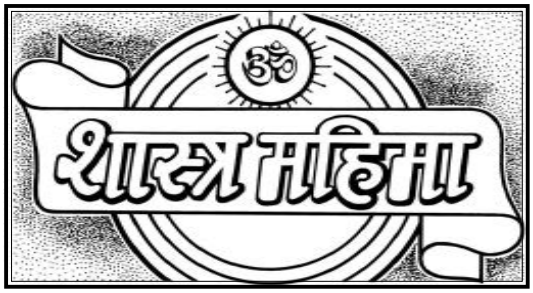

हर घर अमृत पहुँचाओ, हर दिल-दीप जगाओ !

एक बार विद्वानों की सभा में चर्चा हो रही थी कि जीवन का अमृत कहाँ है ?

एक विद्वान ने कहा : ''पूछने की क्या जरूरत है, अमृत तो स्वर्ग में है ।''

दूसरे ने कहा : ''स्वर्ग में अमृत है तो वहाँ से पतन नहीं होना चाहिए । हम स्वर्ग में वास्तविक अमृत नहीं समझते हैं ।''

तीसरे ने कहा : ''अमृत चन्द्रमा में है ।''

चौथे ने कहा : ''अगर चन्द्रमा में अमृत है तो उसका क्षय क्यों होता है ?''

किसीने कहा : ''सागर में अमृत है ।''

''अगर सागर में अमृत होता तो वह खारा क्यों होता !''

बहुत देर चर्चा चली पर कोई निर्णय नहीं हो पाया । इतने में महाकवि कालिदासजी वहाँ आये । सबने कालिदासजी को प्रणाम किया और कहा : ''इस समस्या का हल अब आप ही बताइये ।''

उन्होंने कहा :

''कंठे सुधा वसति वै भगवज्जनानाम् ।

भगवान के प्यारे संतों के कंठ में, उनकी आत्मिक वाणी में ही वास्तविक अमृत होता है । स्वर्ग का अमृत तो क्षोभ से, मंथन से निकला था, वह वास्तविक अमृत नहीं है । संत के हृदय से जो परमात्म-अनुभव, आत्मानंद और ईश्वरीय शांति से ओतप्रोत अमृतवाणी का झरना फूट निकलता है, वही सच्चा अमृत है ।''

हमारे जितने भी शास्त्र बने हैं, वे इसी अमृत से बने हैं इसलिए उनमें हर प्रकार के जागतिक लाभ के साथ-साथ आत्मलाभ कराने की भी शक्ति है । उन्हें शास्त्र नहीं 'सत्शास्त्र' कहा जाता है और उनकी पूजा होती है । जीवन-निर्माण के महत्कार्य में सत्साहित्य नींव का मजबूत पत्थर है, जो भले दिखता न हो पर उसीके आधार पर सफल जीवनरूपी इमारत खड़ी हो सकती है । जैसा साहित्य हम पढ़ते हैं, वैसे ही विचार मन में चलते रहते हैं और उन्हीं विचारों से हमारा सारा व्यवहार प्रभावित होता है । अतः हमें ऐसे साहित्य का अध्ययन करना चाहिए जिससे हमारी शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक - सर्वांगीण उन्नति हो ।

सत्साहित्य की महत्ता को उजागर करती हुई नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के जीवन की एक घटना है । क्लंग घाटी पर युद्ध में १०० अंग्रेजों का सामना आजाद हिन्द फौज के केवल ३ सैनिक कर रहे थे । सुभाषजी के पास समाचार भेजकर पूछा गया कि क्या सैनिक पीछे हटा लिये जायें ? वे असमंजस में पड़ गये परंतु घबराये नहीं । उनके जीवन में सत्शास्त्रों का बहुत प्रभाव था । जब भी कठिन परिस्थितियाँ आती थीं तो वे उनकी शरण जाते थे । उस दिन उन्होंने एक सत्साहित्य पढ़ा, जिसमें एक स्थान पर लिखा था - **'सिर पर संकटों के बादल मँडरा रहे हों, तब भी धैर्य नहीं खोना चाहिए ।'** यह पढ़कर उन्होंने उन तीनों सैनिकों को संदेश भेजा : ''भारत माता के वीर सपूतो ! जब तक शत्रु का सफाया नहीं होता, डटे रहो । परमात्मा हमारे साथ है ।''

इन शब्दों ने सैनिकों के शरीर में जैसे जान ही फूँक दी । वे ऐसे जी-जान से लड़े कि अंग्रेज सैनिकों के छक्के छूटने लगे । उनके हौसले पस्त हो गये और वे चौकी छोड़ के भाग गये । यह परिणाम सत्साहित्य के कारण ही आया । इसलिए सत्साहित्य की तो जितनी महिमा गायी जाय उतनी कम है ।

पूज्य बापूजी के गुरुदेव पूज्यपाद भगवत्पाद

श्री लीलाशाहजी महाराज का यह विश्वास था कि सत्साहित्य, धर्म एवं नीति के शास्त्र ही मानव-जीवन का निर्माण करने एवं जीवन को उन्नति के पथ पर ले जानेवाले हैं। साहित्य मनुष्य-जीवन, समाज एवं देश में नयी जागृति लाता है। लोगों को सच्ची राह बता के उन्नति के पथ पर चलने के लिए प्रेरित करता है। वे कहते थे कि ''सच्चा साहित्य वही है जिसमें **'सत्यं शिवं सुंदरम्'** के गीत गूँजते हों।''

सत्यम् अर्थात् जो निज स्वरूप का मार्ग बताये, **शिवम्** अर्थात् जो कल्याणकारी हो, **सुंदरम्** अर्थात् जो सुंदर जीवन जीने की कला बताये।

पूज्य संत श्री आशारामजी बापू के कथनानुसार ऐसा साहित्य ही वास्तव में मानव-जीवन का अमूल्य खजाना है। इससे हमें बहुत अच्छा ज्ञान मिलता है, भगवान में प्रेम जागता है, आत्मकल्याण होता है। शरीर को निरोग बनाने, मन को प्रसन्न रखने और बुद्धि को दिव्य बनाने की अद्भुत व्यवस्था हमारे सत्शास्त्रों में है। सत्साहित्य में महापुरुषों, गुरुभक्तों और भगवान के लाड़ले संतों की कथाओं व अनुभवों का वर्णन आता है, जिसका बार-बार पठन-मनन करके आप सचमुच महान बन जाओगे। जीवन में सत्साहित्य का महत्त्व बताते हुए युद्ध के मैदान में भगवान स्वयं कहते हैं :

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि॥

'(मेरे ज्ञान का जो कोई संसार में प्रचार करेगा) उससे बढ़कर मेरा प्रिय कार्य करनेवाला मनुष्यों में कोई भी नहीं है तथा पृथ्वी भर में उससे बढ़कर मेरा प्रिय दूसरा कोई भविष्य में होगा भी नहीं।' **(गीता : १८.६९)**

स्वामी विवेकानंद कहते थे : 'जिस घर में सत्साहित्य नहीं, वह घर नहीं वरन् श्मशान है।'

पूज्य बापूजी कहते हैं : ''मेरे गुरुदेव अस्सी वर्ष की आयु में भी किताबों की गठरी बाँधकर नैनीताल की पहाड़ियों में जाते, सत्संग सुनाते, प्रसाद बाँटते और लोगों को सत्साहित्य पढ़ने को देते। उन्हीं महापुरुष के निष्काम कर्मयोग का फल आज हम लाखों लोगों को मिल रहा है। साधक दिन-रात एक करके सत्साहित्य को लोगों तक पहुँचाने की जो सेवा करते हैं, उससे उनके हृदय में निष्कामता का आनंद उभरने लगता है।''

पूज्य बापूजी के ओजपूर्ण पावन अमृतवचनों के संकलन से बनी पुस्तकें समाज के हर वर्ग के लोगों के सर्वांगीण विकास की कुंजियाँ सँजोये हुए हैं। अत्यंत कम कीमत में मिलनेवाला यह सत्साहित्य वैचारिक प्रदूषण मिटाने में अत्यधिक कारगर सिद्ध हुआ है। इसके प्रचार-प्रसार से कितने ही घर बरबाद होने से बच गये, कितने ही लोगों की डूबती जीवन-नैया किनारे लग गयी, कितने ही आलसी-प्रमादी और पलायनवादी लोग कर्मनिष्ठ बन गये, व्यसनी-दुराचारी लोग सदाचारी व समाजसेवी हो गये, नास्तिक आस्तिक हो गये, पतन की राह जानेवाले नैतिक, आध्यात्मिक उन्नति की ओर चल पड़े... इससे समाज, राष्ट्र एवं समग्र विश्व को कितना लाभ हो रहा है, वह लाबयान है ! वे धनभागी हैं जो सांसारिक कार्यों से समय निकाल के भगवत्प्रसन्नता पाने हेतु पूज्य गुरुदेव की अमृतवाणी को घर-घर पहुँचाने का पुनीत कार्य कर रहे हैं। इस प्रकार ये पुण्यात्मा राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रसेवा का अमित पुण्य-लाभ भी घर बैठे ही ले रहे हैं। पूज्यश्री का संदेश अब हमें हर घर में पहुँचाना है, हर दिल को जगाना है !

गुरुपूर्णिमा महापर्व पर हम सब संकल्प लें कि मानव-समाज को उन्नति के मार्ग पर ले जानेवाले आश्रम के सत्साहित्य को त्यौहार, जन्मोत्सव, शादी-विवाह आदि शुभ प्रसंगों पर अपने सगे-संबंधियों, मित्रों या अन्य लोगों में वितरित करेंगे। **'घर-घर सत्साहित्य पहुँचाओ'** अभियान चलायेंगे और पूज्यश्री की अमृतवाणी से ओतप्रोत सत्साहित्य को घर-घर तक पहुँचाने के भगीरथ सेवाकार्य में अधिक-से-अधिक सहभागी बनेंगे।

(यह सत्साहित्य सभी आश्रमों व समितियों के सेवा-केन्द्रों पर उपलब्ध है।) ❐

परमानंदप्राप्ति का मार्ग

– संत पथिकजी महाराज

मनुष्य का ही नहीं वरन् प्राणिमात्र का लक्ष्य है दुःख का सर्व प्रकार से अभाव और सुख में निरंतर स्थिति। और वह अविनाशी परमानंद केवल पूर्णता में ही मिलेगा। अभी तक तुमने जितने आधारों को आनंदप्राप्ति के लिए पकड़ा, वे सभी अपूर्ण ही हैं। जब तुम पूर्ण तत्त्व को समझ लोगे तभी पूर्णानंद के दर्शन भी होंगे। अब यह भी देख लो कि वह पूर्ण तत्त्व है क्या ? सोचकर सद्गुरु के महावाक्यों पर ध्यान दो। वह पूर्ण तत्त्व अखण्ड रूप से व्यापक है पर अपनी धुन में दीवाने पथिक तो चलते ही रहते हैं। प्यारे साथी ! यदि तुम न भी चलो तो कब तक ? अंत में मायाबंधन, दुःखों से निकलना ही पड़ेगा। तब इधर जितना समय खो दोगे उसका पश्चात्ताप ही तो होगा ! अतः अब कायर न बनना, कहीं रुक न जाना। हे पथिक ! आओ, अब अपने परमानंद-लक्ष्य की ओर चलने का पथ जो सद्विचार है, उसी जगह चलो। पथिक ! सावधान होकर समझो।

आओ, प्रथम भगवान सद्गुरुदेव की मंगलकारी स्तुति करते हुए इस शुभ मुहूर्त को और भी परम शुभ बनावें।

अब हम पर तुम दया करो गुरुदेवजी...
कितने दिन से भटक रहे हैं, दुःख के काँटे खटक रहे हैं।
कहाँ-कहाँ हम अटक रहे हैं, करुणाकर मम हाथ धरो ॥
मैं आचार-विचार हीन हूँ, निर्बल हूँ, अतिशय मलीन हूँ।
यही विनय सब भाँति दीन हूँ, मोहि न परखो खोंट खरो ॥
तुम ही मेरे सद्गति दाता, तुम ही पिता तुम्हीं हो माता।
तुम ही सरबस सबविधि त्राता, आज हमारे क्लेश हरो ॥
अब हम पर तुम दया करो गुरुदेवजी...

पथिक रूप में अविनाशी आत्मन् ! तुमने सद्गुरु, संत-सत्संग, कृपा के बल से अपने परम लक्ष्य परमानंद का जो सद्विचार पथ है, उसे तो पा लिया। अब इस पथ में यात्रा करने के लिए सद्विवेकरूपी दृष्टि खोलो। इसके द्वारा ही तुम पग-पग पर सावधान होकर कुशलता से चल सकोगे।

स्मरण रहे, उसी समय तुम्हारी दृष्टि के आगे धुँधलापन आ जायेगा, जब तुम अपनी कामनाओं के पीछे दौड़ना शुरू करोगे; तब तुम उस सत्य-प्रकाश के पथ में न जाओगे। सावधान रहो कि तुम्हारे ही मनोविकार तुम्हारी उन्नति में बाधक और दुःखद हो सकते हैं। अतः इन पर दृढ़ संयम रखो। देखो, जब तुम्हारी सद्गुरु-प्रदत्त विवेकदृष्टि कुछ विकृत हो जाय तो कहीं भी इधर-उधर मत दौड़ो। अपने पथ-प्रदर्शक की, संतों की शरण में जाकर अपनी क्षति ठीक करो, यही एकमात्र उपाय है। अपने सद्गुरु के ध्यान को कभी न भूलो, तुम्हारी यात्रा उन्हींकी परम कृपा से हो रही है। तुम अपनी इस यात्रा में दूसरों की सहायता का भरोसा रखने की अपेक्षा अपने अंतर्बल का विश्वास करो। तुम्हारे साथ केवल श्री सद्गुरु की कृपा ही बहुत विशेष है, उसी विश्वास पर उत्साहपूर्वक इधर-उधर न झाँकते हुए सामने पैर बढ़ाओ।

हे पथिक ! अब आगे जो कुछ भी जानना बाकी है, उसे तुम वस्तुतः सद्गुरुदेव से ही जान सकोगे। अतः सद्गुरुदेव की दिव्य वाणी को सुनो, उन्हींका आश्रय लो और जब तक कुछ भी चाह है तब तक परमेश्वर का अनन्यभाव से अवलम्बन लो, अन्यत्र कहीं भी दृष्टि न डालो। वे ही एक सबका परमाश्रय हैं। उनका ही सतत चिंतन, स्मरण, ध्यान करते रहो। चिंतन की महिमा का फल तो तुम्हारे आगे प्रत्यक्ष ही है। जो जिसका चिंतन, ध्यान करता है, वह उसीको प्राप्त होता है। अतः तुम अपने परम लक्ष्य परमानंदमय परमात्मा का ही निरंतर स्मरण, स्वभाव, गुण-चिंतन करते हुए सद्व्यवहारपूर्वक अपने कर्तव्यपालन में दृढ़ रहो। ❐

बड़ों की बड़ाई

(पूज्य बापूजी की ज्ञानमयी अमृतवाणी)

प्रयागराज में जहाँ स्वामी रामतीर्थ रहते थे उस जगह का नाम रामबाग था। एक बार वे वहाँ से स्नान करने हेतु गंगा नदी गये। उस समय के कोई स्वामी अखण्डानंदजी उनके साथ थे। स्वामी रामतीर्थ स्नान करके बाहर आये तो अखण्डानंदजी ने उन्हें कौपीन दी। नदी के तट पर चलते-चलते उनके पैर कीचड़ से लथपथ हो गये। इतने में मदनमोहन मालवीयजी वहाँ आ गये। इतने सुप्रसिद्ध और कई संस्थाओं के अगुआ मालवीयजी ने अपने कीमती दुशाले से स्वामी रामतीर्थ के पैर पोंछने शुरू कर दिये। अपने बड़प्पन की या 'लोग क्या कहेंगे' इसकी चिंता उन्होंने नहीं की। यह शील है।

अभिमानं सुरापानं गौरवं रौरवस्तथा।
प्रतिष्ठा शूकरी विष्ठा त्रीणि त्यक्त्वा सुखी भवेत् ॥

अभिमान करना यह मदिरापान करने के समान है। गौरव की इच्छा करना यह रौरव नरक में जाने के समान है। प्रतिष्ठा की परवाह करना यह सूअर की विष्ठा का संग्रह करने के समान है। इन तीनों का त्याग करके अपने सहज सच्चिदानंद स्वभाव में रहना चाहिए।

प्रतिष्ठा को जो पकड़ रखते हैं वे शील से दूर हो जाते हैं। प्रतिष्ठा की लोलुपता छोड़कर जो ईश्वर-प्रीत्यर्थ कार्य करते हैं उनके अंतःकरण का निर्माण होता है। जो ईश्वर-प्रीत्यर्थ कीर्तन करते हैं, ध्यान करते हैं उनके अंतःकरण का निर्माण होता है।

ध्यान तो सब लोग करते हैं। कोई शत्रु का ध्यान करता है, कोई रुपयों का ध्यान करता है, कोई मित्र का ध्यान करता है, कोई पति का, पत्नी का चिंतन-ध्यान करता है। यह शील में नहीं गिना जाता। जो निष्काम भाव से परमात्मा का चिंतन व ध्यान करता है, उसके शील में अभिवृद्धि होती है।

नारायण मंत्र

एक बार मदनमोहन मालवीयजी गीताप्रेस, गोरखपुर (उ.प्र.) में श्री हनुमानप्रसादजी पोद्दार के अतिथि बने। दूसरे दिन सुबह मालवीयजी ने हनुमानप्रसादजी से कहा :

''मैं आपको एक दुर्लभ चीज देना चाहता हूँ, जो मुझे अपनी माताजी से वरदान रूप में मिली थी। उससे मैंने बहुत लाभ उठाया है।''

मालवीयजी उस दुर्लभ चीज की महिमा बताने लगे तो भाईजी ने अत्यंत उत्सुकता से कहा : ''वह दुर्लभ चीज कृपया शीघ्रातिशीघ्र दीजिये।''

मालवीयजी ने कहा : ''आज से चालीस वर्ष पूर्व मैंने माँ से आशीर्वाद माँगा : 'मैं हर कार्य में सफल होऊँ किंतु सफल होने का अभिमान मुझे न हो।' अभिमान और विषाद आत्मशक्ति क्षीण कर देते हैं।'' माँ ने कहा : 'जड़-चेतन में आदिनारायण निवास कर रहे हैं। उन प्रभु का प्रेम से स्मरण करके फिर कार्य करना।'

''भाईजी ! चालीस वर्ष हो गये, जब-जब मैं स्मरण भूला हूँ तब-तब असफल हुआ हूँ, अन्यथा सफल-ही-सफल रहा हूँ। इस पवित्र मंत्र का आप भी फायदा उठायें।''

हनुमानप्रसादजी ने उस मंत्र का खूब फायदा उठाया। उनके परिवार व अन्य सहस्रों लोगों ने भी उस पावन मंत्र का खूब लाभ उठाया।

कार्य के आदि में, मध्य में और अंत में 'नारायण... नारायण... नारायण... नारायण...' स्मरण करनेवालों को अवश्य लाभ होता है। अतः आप लोग भी इस मंत्र का फायदा उठायें।

(आश्रम से प्रकाशित 'जीवन विकास' पुस्तक से) ❐

पतितों को भी पावन कर देती है मंत्रदीक्षा

- पूज्य बापूजी

मूढ़ व्यक्ति परिस्थितियों से तृप्ति चाहता है और बुद्धिमान अपने आत्मा से तृप्त रहता है। जो ईश्वरप्राप्ति के रास्ते चलता है वह खुद भी उन्नत होता है, खुद भी मुक्त होता है और दूसरों को भी मुक्त करता है। आप भी इसी जन्म में ईश्वरप्राप्ति का पक्का इरादा करके दृढ़तापूर्वक चल पड़ो। अपनी मेहनत के बल से नहीं, भगवान की, गुरु की कृपा से भगवान सरलता से मिल जाते हैं। अपना ईमानदारी का प्रयत्न और भगवत्कृपा... अपनी तत्परता में ईश्वरकृपा मिला दो। जैसे बच्चे का हाथ पकड़कर माँ या बाप उसकी यात्रा करवा देते हैं, ऐसे भगवान और संत भी भगवत्प्राप्ति की यात्रा करवा देते हैं। मेरे गुरुजी ने मेरा हाथ पकड़कर यात्रा करवा दी, मैंने क्या मेहनत की !

तीन प्रकार के लोग होते हैं। एक, भगवान की भक्ति कर संसार की चीज चाहते हैं। दूसरे, भगवान की भक्ति से भगवान को ही चाहते हैं। तीसरे, प्रीतिपूर्वक भजन कर गुरुकृपा और भगवत्कृपा से भगवान को चाहते हैं। उन लोगों की बाजी ऐसी लगती है जैसे कोई कंगाल आदमी करोड़पति की गोद चले जाने से बिना परिश्रम किये ही करोड़पति बन जाता है। जैसे - सौराष्ट्र के हालार प्रांत में जामखम्भालिया गाँव के लोहार पंचाल जाति की एक कुप्रसिद्ध सुंदर कन्या वहाँ के सुप्रसिद्ध गुरु की गोद चली गयी और उसका जीवन बदल गया। उसका नाम लोयण था।

पहले एक राजपूत (लाखा) से उसका गलत संबंध हो गया था। एक दिन नगर में संत सैलनसी बाबा का आगमन हुआ। पनघट पर कुछ माइयाँ आपस में बात कर रही थीं कि 'जल्दी-जल्दी पानी भरो, संत के दर्शन करने जायेंगे, जल्दी करो।'

लोयण बोली : ''मैं भी चलूँगी।''

''लोयण ! तुम सत्संग में नहीं जा सकती।''

''जाना चाहूँ तो कौन रोक सकता है ?''

माइयाँ मसखरी करते हुए बोलीं : ''लाखा... ! तुमको तो लाखा से पूछना पड़ेगा !''

लोयण को चोट लग गयी। वह सोचती है, 'क्या मैं इतनी नीच हूँ कि संत के सत्संग में नहीं जा सकती ! मैं घर नहीं जाऊँगी, पहले उन महापुरुष के पास ही जाऊँगी।'

सिर पर पानी का मटका लिये वह पहुँची। देखा तो संतश्री अभी आ ही रहे थे। तुच्छ समझकर उसकी ऐसी-वैसी बातों की फरियाद करके लोगों ने उसे बाबा के पास जाने से रोकना चाहा।

बाबा बोले : ''नहीं, नहीं... यह तो मेरी बेटी है, आने दो। क्यों बेटी ! पानी ले आयी है न अपने बाबा के लिए ?''

अब देखो भगवान की कैसी लीला है ! जिसको लोग तुच्छ मानते थे, जो लोगों की नजरों में हीन कन्या, कामिनी कन्या थी, उसको संत के हृदय के द्वारा बुलवाते हैं कि 'बेटी ! तू मेरे लिए पानी लायी है न ?'

लोयण बोली : ''बाबा ! सारा गाँव मुझे दुत्कारता है। मुझ पापिन के हाथ का पानी आप पियेंगे क्या ?''

''तू अपने को पापिन मत मान। तू तो मेरी बेटी लगती है, ला पानी।''

लोग दाँतों तले उँगली दबाते रह गये। बाबा ने उसका जल पी लिया और कहा : ''तू सत्संग में आना। आयेगी न ?''

''हाँ बाबा ! आऊँगी।''

कभी-कभी अपराधी प्रवृत्ति के लोग और दो नम्बरी लोग वचन के ऐसे पक्के होते हैं कि एक नम्बरी देखते रह जायें।

लोयण गयी। संत सैलनसी का सत्संग सुना, उसका हृदय ग्लानि से भर गया। पश्चात्ताप की आग ने पुरानी वासनाओं और पापों को झकझोर दिया। उसका हृदय अब धीरे-धीरे भगवत्प्रेम से, भगवद्भक्ति से भर गया।

ग्लानि से भरी हुई लोयण सत्संग के बाद बाबा के पास जाकर आँसू बरसाते हुए कहती है कि ''बाबा ! आप मुझे मंत्रदीक्षा देकर स्वीकार करेंगे ?''

बाबा ने उसको दीक्षा दी। जप, ध्यान, प्राणायाम, त्राटक आदि करने की विधि बतायी और साथ में एक तानपूरा (वीणा) देते हुए कहा : ''ले इसे बजा। आज से प्रभु के गीत गाना, आनंदित रहना। दीक्षा मिली है... जप करना, शास्त्र पढ़ती रहना, भजन गाते-गाते शांत होती जाना, भगवन्नाम जपते हुए शांत... भगवन्नाम का ऊँचा उच्चारण करके शांत...। रात्रि को सोते समय श्वासोच्छ्वास को गिनना, सुबह उठते समय भगवान से, गुरु से एकाकार हो जाना। अब तू काम के कीचड़ में नहीं गिरेगी, तू रामरस में चमकेगी।''

सत्संग पापी-से-पापी व्यक्ति को भी पुण्यात्मा बना देता है। सैलनसी बाबा की आज्ञा अनुसार लोयण ने अपनी पूरी दिनचर्या बदल ली। महाराज ! आस-पड़ोस में जो लोग उसे हीन दृष्टि से देखते थे, नफरत करते थे, वे आदर की दृष्टि से देखने लगे, सम्मान करने लगे। अब वह लोयण कामिनी नहीं, लोयण वेश्या नहीं, धीरे-धीरे लोयण देवी बन गयी।

लाखा डकैती करके दो-चार महीनों के बाद गाँव में पहुँचा। लोगों ने बताया कि 'लोयण भक्ताणी बन गयी है।'

लाखा ने देखा कि लोयण की वेशभूषा बदल गयी है और हाथों में तान-तम्बूरा है।

''लोयण ! तूने यह क्या कर लिया है ?''

लोयण बोली : ''वह भूतकाल हो गया लाखा ! सदा कीड़ा दलदल में रहे, कोई जरूरी नहीं है; कोई महापुरुष उसे उठाकर ऊँची जगह पर भी पहुँचा सकते हैं न !''

''लोयण ! तू यह तान-तम्बूरा छोड़ दे, नहीं तो मैं तेरा तम्बूरा उठा के फेंक दूँगा।''

''लाखा ! दुबारा मत बोलना। यह मेरे गुरुजी की प्रसादी है, कुछ-का-कुछ हो सकता है।''

लाखा ने लोयण को बलपूर्वक गले लगाने का प्रयास किया, तभी लोयण ने पुकार लगायी : 'हे प्रभु ! बचाओ।' लाखा के शरीर में एक बिजली-सी दौड़ गयी और वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। जब वह मूर्च्छा से जगा तो देखा कि सारे शरीर में कोढ़ फूट निकला है। घर गया, कोई दवाई करो तो कुछ काम नहीं आती। ज्यों-ज्यों इलाज किया, त्यों-त्यों मर्ज बढ़ता गया। बारह साल लाखा बिस्तर पर पड़ा रहा और लोयण बारह साल की साधना में इतनी आगे बढ़ी कि पूरे सौराष्ट्र को लोयण देवी के भजनों ने, तान-तम्बूरों ने डोलाना शुरू कर दिया। लोयण अब भोग्या नहीं, भगवान का प्रसाद बाँटनेवाली देवी हो गयी। गुरुजी आये। लोयण की साधना में ऊँचाई देखकर उन्हें संतोष हुआ।

''बाबा ! मैं लाखा का भला चाहती हूँ। आप उसका भी मंगल कर सकते हो न !''

बाबा बोले : ''हाँ लोयण ! अब उसके कर्म कट गये हैं। चलो, हम चलते हैं लाखा के घर।''

लोयण बाबा के साथ लाखा के घर गयी। लाखा कोढ़ की बीमारी से रिबा रहा था, मूर्च्छित-सा पड़ा था।

लोयण ने कहा : ''लाखा ! मैं लोयण आयी हूँ।''

लोयण का नाम सुनते ही मानों उसके प्राणों में नयी चेतना का संचार हो गया। उसने आँखें खोलीं। आँखों में अब वह काम-विकार नहीं था, पश्चात्ताप के आँसू बह रहे थे। वह हाथ जोड़कर बोला : ''लोयण ! तू मुझे माफ कर दे। तू धरती की देवी, प्रभु का प्रेमावतार है।''

लोयण बोली : ''लाखा ! मेरे गुरुदेव आये हैं।''

लाखा ने हाथ जोड़कर बाबा को प्रणाम किया, बोला : ''बाबा ! लोयण को आपने दिव्य देवी बना दिया, अब मुझ पापी पर भी दया करो। बाबा ! लोयण को आपने जो मंत्रदीक्षा का दान दिया, वह मुझे भी दे दो। मेरे पाप का दण्ड मुझे मिल गया।''

बाबा मुस्कराये, अपना कृपादृष्टिवाला जल पिला दिया और थोड़ा-सा उसके ऊपर छाँट दिया। उसे भी भगवन्नाम की दीक्षा दे दी।

लाखा, लोयण ऐसे भक्त हो गये, ऐसे पवित्र हो गये कि उनके भजन सुनकर और उनके सम्पर्क में, सत्संग में आकर कितने लोग तर गये उसका हिसाब मैं नहीं बता सकता... कोई नहीं बता सकता। मेरे सत्संग से कितने लोगों को लाभ हुआ, मैं नहीं बता सकता हूँ, भगवान ही जानें। संत के दर्शन-सत्संग और उनसे प्राप्त मंत्रदीक्षा का कैसा दिव्य प्रभाव है !

चौरासी लाख योनियों के बंधनों में बँधा जीव 'यह मिले तो सुखी... वह मिले तो सुखी... यह भोगूँ तो सुखी...' ऐसा सोचते-सोचते सुखी होने के चक्कर में दुःख, पीड़ा, वासना, विकार में ही मर जाता है, निर्विकार नारायण के ज्ञान और आनंद से अछूता रह जाता है।

निगुरे का नहीं कहीं ठिकाना, चौरासी में आना जाना... हाय रे हाय !

केवल सद्गुरु ही तारणहार हैं, जो जीव को चौरासी लाख योनियों के बंधनों से मुक्त कराते हैं। सद्गुरु जब शिष्य को मंत्रदीक्षा देते हैं तो उसकी सुषुप्त शक्तियाँ जागृत होती हैं, उसके अंदर के रहस्य खुलते हैं। नाम-कमाई कर वह भवसागर से पार हो जाता है, स्वयं सुखस्वरूप हो जाता है। फिर उसका पुनर्जन्म नहीं होता। ❐

देर न करो...

- पूज्य बापूजी

अपने देवत्व में जागो। कब तक शरीर, मन और अंतःकरण से संबंध जोड़े रखोगे ! एक ही मन, शरीर, अंतःकरण को अपना कब तक मानते रहोगे ! अनंत-अनंत अंतःकरण, अनंत-अनंत शरीर जिस चिदानंद में प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वह शिवस्वरूप तुम हो। फूलों में सुगंध तुम्हीं हो। वृक्षों में रस तुम्हीं हो। पक्षियों में गीत तुम्हीं हो। सूर्य और चाँद में चमक तुम्हारी है। अपने **'सर्वोऽहम्'** स्वरूप को पहचानकर खुली आँख समाधिस्थ हो जाओ। देर न करो। काल कराल सिर पर है।

ऐ इन्सान ! अभी तुम चाहो तो सूर्य ढलने से पहले अपने जीवनतत्त्व को जान सकते हो। हिम्मत करो... हिम्मत करो। ॐ... ॐ... ॐ...

जब तक आत्मसाक्षात्कार न हो, तब तक आदरसहित ब्रह्मज्ञानी संतों का संग-सत्संग करते रहना। सत्संग की बातों को विचारते रहना।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'ईश्वर की ओर' से)

हरि सेवा कृत सौ बरस, गुरु सेवा पल चार...

१७०३ ईसवी में अलवर शहर से ८ कि.मी. के अंतर पर डेहरा गाँव में एक दिव्य आत्मा का अवतरण हुआ, नाम रखा गया - रणजीत । संसाररूपी रण को सचमुच जीतनेवाला वह होनहार बालक रणजीत हीरा था । उनके चित्त में विवेक जगता कि 'खाना-पीना, रहना-सोना, मिलना-जुलना, आखिर बूढ़े होना और मर जाना... बस, इसके लिए मनुष्य-जीवन नहीं मिला । मनुष्य-जीवन किसी ऊँची अनुभूति के लिए मिला है ।' अब सद्गुरु तो थे नहीं उनके, फिर भी वे सुना-सुनाया राम-राम रटते थे । इससे पाँच वर्ष की उम्र में उनकी ऐसी मति-गति हो गयी कि मन में भगवत्प्रेम और बुद्धि में भगवत्प्रकाश छाने लगा।

एक दिन जब वे रामनाम-कीर्तन में मस्त थे, तब वैरागी-तपस्वी वेदव्यासनंदन शुकदेवजी ने उन्हें अपनी गोद में लेकर प्यार किया । इससे उनके हृदय में प्रभुप्रेम की प्रबल धारा प्रवाहित हो गयी । छः वर्ष की उम्र में उनकी पढ़ाई शुरू करवा दी गयी । मुल्ला-मौलवियों ने बहुत प्रयास किया लेकिन बालक रणजीत उन मुल्ला-मौलवियों और पढ़ानेवाले उस्तादों के सामने देखता रहे, कुछ पढ़े ही नहीं। उस्तादों ने खूब समझाया, बदले में उन्होंने उनको एक ही बात सुनायी -

आल जाल तू कहा पढ़ावे ।
कृष्णनाम लिख क्यों न सिखावे ॥

जो सबको कर्षित-आकर्षित, आनंदित करता है, सबका अंतरात्मा होकर बैठा है उस परमात्मा का नाम आप मुझे क्यों नहीं पढ़ाते ?

जो तुम हरि की भक्ति पढ़ाओ ।
तो मोकू तुम फेर बुलाओ ॥

जो भगवान की भक्ति पढ़ा सकते हो तो मुझे बुलाना, नहीं तो यह आल-जाल मेरे को मत पढ़ाओ । जोर मारनेवाले थक गये।

आठ वर्ष की उम्र में इनके पिता मुरलीधर अचानक लापता हो गये, फिर उनका पता न चल सका । माता कुंजी देवी पतिपरायणा थीं । उनके चित्त को बहुत क्षोभ हुआ। ये आठ वर्ष के बालक माँ को ढाँढ़स बँधाते कि 'मैया ! यह सब पति-पत्नी, लेना-देना - यह संसार का खिलवाड़ है, आत्मा अमर है ।' वे उस रामस्वरूप परमात्मा की भक्ति की बात करते ।

पति एवं सास-ससुर के चले जाने के बाद कुंजी देवी के लिए डेहरा में रहना असहनीय हो गया । जिससे वे पति के चाचा से अनुमति लेकर बालक रणजीत के साथ दिल्ली अपने मायके चली गयीं । दिल्ली जाते समय वे रास्ते में 'कोट कासिम' में बालक रणजीत के पिता की बुआ के घर पर रुके ।

बालक रणजीत को देखकर बुआजी बड़ी प्रसन्न हुईं और बालक के स्नेहपाश में ऐसी बँध गयीं कि कुंजी देवी को समझाकर रणजीत को अपने घर रख लिया। थोड़े दिन वहाँ रहने के बाद बालक अपनी माँ के पास दिल्ली आ गया ।

यहाँ भी मुल्ला-मौलवी और फारसी तथा संस्कृत के विद्वानों को रखा गया कि बालक कुछ पढ़ ले । परंतु बालक रणजीत ने तो ऐसी विश्रांति पढ़ी थी और भगवान के नाम में ऐसे रत रहते थे कि सारी पढ़ाइयाँ जहाँ से सीखी जाती हैं, उस परम पद में अनजाने में ध्यानस्थ हो जाते थे । एक दिन रणजीत ने कहा :

हमें आज से पढ़ना नाँहीं ।
जिकर न होय फिकर के माँहीं ॥

यह सुनकर मुल्ला-मौलवी हैरत में आ गये ।

सुनि मुल्ला हैरत में आया ।
इस लड़के पर रब की छाया ॥

बहुत प्रयत्न करने के बाद आखिर मुल्ला-मौलवियों को कहना पड़ा कि ''इस पर तो अल्लाह की, रब की छाया है । अल्लाह के सिवाय इसको कोई सार नहीं लगता । यह सारों-के-सार में आनंदित है, सारों-के-सार में सुखी है, सारों-के-सार में संतुष्ट है । यह तो 'भगवान की पढ़ाई के बिना की और सारी पढ़ाई झूठी है, झूठी माया में फँसानेवाली है ।' - ऐसी बात कहता है । हमारे दिल को भी इस बालक की बात सुनकर, इसके दीदार करके बड़ा आराम मिलता है ।''

इस प्रकार १२ वर्ष की उम्र हुई । ज्ञान-ध्यान और प्रभुप्रेम की प्रसादी से उनकी निर्णयशक्ति और सूझबूझ तो ऐसी निखरी कि दिखने में तो १२ वर्ष का बालक लेकिन बड़े-बड़े विद्वान उनको देखकर नतमस्तक हो जाते थे !

रणजीत की आँखों से कभी तो भगवान की बात करते-करते आँसुओं की धारा बहे, कभी वे उनके प्रेम में, प्रेम-समाधि में शांत हो जायें। इस प्रकार उनकी १६ से १९ वर्ष की उम्र भगवद्विरह, भगवच्चर्चा और एकांत मौन में बीती । अंदर में होता कि 'जब तक गुरु नहीं तब तक पूर्ण गति नहीं है ।' तो सद्गुरु के लिए तड़प पैदा हुई कि 'ऐसे दिन कब आयेंगे कि मुझे साकार रूप में सद्गुरु प्राप्त होंगे ?'

ऐसी बिरह अगिन तन लागी ।
गई भूख अरु निद्रा भागी ॥
सतगुरु कू ढूंढ़न ही लागे ।
ढूंढ़े विरकत तपसी नागे ॥

अब भोजन रुचे नहीं और नींद आये नहीं। कभी साधु-संतों को देखें तो उनसे मिलने जायें। १९ वर्ष की उम्र हुई । ढूँढ़ते-ढूँढ़ते आखिर वह पावन दिन आया। मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) के पास गंगा-यमुना के दोआबे पर स्थित मोरनातीसा नामक स्थल पर उन्हें एक महात्मा के दर्शन हुए, जिन्हें देखते ही उनके मन में प्रेम, श्रद्धा और शांति की ऐसी प्रबल तरंगें उठीं कि उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ जैसे उनकी वर्षों की खोज आज पूरी हो गयी है ।

देखते-ही-देखते दिल खो गया ।
जिसको खोजता था उसीका हो गया ॥

वे महात्मा और कोई नहीं बल्कि वही शुकदेवजी महाराज थे, जिन्होंने बालक रणजीत को गोदी में बिठाकर प्यार किया था । जिन सद्गुरु की खोज थी वे मिल गये । रणजीत ने प्रेममय हृदय और आँसुओं से भरे नेत्रों से सद्गुरु के चरणकमलों में माथा टेकते हुए स्वयं को गुरुचरणों में समर्पित कर दिया । महात्मा शुकदेवजी ने उन्हें विधिवत् दीक्षा दी और उनका पारमार्थिक नाम श्याम चरनदास रख दिया । गुरु और शिष्य के बीच दीक्षा-शिक्षा पाँच प्रहर चली । शुकदेवजी महाराज उनको विभिन्न उपासनाएँ, विभिन्न दृष्टियाँ बताते रहे । अंत में विरक्त शुकदेवजी महाराज ने कहा : ''अब तुम दिल्ली में दादाजी के पास जाओ, वहीं अभ्यास करो ।'' संसार के काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग-द्वेष, मेरे-तेरे के वातावरण में यह युवक एक दिन भी रहना नहीं चाहता था । अपनी भावनाओं को दबाकर सद्गुरु की आज्ञा मान के वे दिल्ली के लिए चल तो दिये परंतु उनकी दशा बहुत दयनीय थी । वे गुरु के वियोग में हर क्षण रोते रहते ।

एक रात ध्यान में दर्शन देकर विरक्त-शिरोमणि शुकदेवजी ने कहा कि ''हम तो अरण्यों में कभी कहीं, कभी कहीं विचरण करते हैं । शरीर से तो हम तुमको साथ में नहीं रख सकते लेकिन आत्मभाव से मैं तुम्हारे साथ ही रहूँगा । जब तुम

तीव्रता से याद करोगे तो मैं तुम्हें दर्शन देने को प्रकट हो जाऊँगा।''

कहा कि जब जब ध्यान करैहो।
ऐसे ही तुम दर्शन पैहो ॥
अरु हम तुम कभू जुदे जु नाही।
तुम मों में मैं तुम्हरे मांही ॥

शुकदेवजी महाराज की यह उदारताभरी आशीष पाकर रणजीत को थोड़ा संतोष हुआ। दिल्ली में एक जगह पसंद करके वहाँ गुफा बना के वे धारणा-ध्यान करने लगे और पाँच-पाँच, सात-सात प्रहर ध्यानमग्न रहने लगे।

वे एक प्रहर लोगों के बीच सत्संग की सुवास फैलाते। दिल्ली की भिन्न-भिन्न जगहों में उन्होंने अपने भिन्न-भिन्न कार्यक्रमों द्वारा लोक-जागृति की। इस प्रकार कुछ वर्ष बीते और इन महापुरुष के चित्त की शांति से त्रिकाल-ज्ञान प्रकट होने लगा। वे बार-बार कहते थे कि 'मैं तो बुरे-से-बुरा था पर मेरे सद्गुरु शुकदेवजी ने मुझ पर कृपा करके मेरा बेड़ा पार कर दिया।

किसू काम के थे नहीं, कोई न कौड़ी देह।
गुरु सुकदेव कृपा करी, भई अमोलक देह ॥'

वाणी उनकी ऐसी थी कि -

पितु सूँ माता सौ गुना, सुत को राखै प्यार।
मन सेती सेवन करै, तन सूँ डाँट अरु गार[1]।
मात सूँ हरि सौ गुना, जिन से सौ गुरुदेव।
प्यार करैं औगुन हरैं, चरनदास सुकदेव ॥

पिता से माता सौ गुना अधिक बच्चे को प्यार करती है। मन से उसको चाहते हुए भी उसकी भलाई के लिए बाहर से डाँटती है, ऐसे ही माता से भी दस हजार गुना अधिक प्यार देनेवाले सद्गुरु मन से तो स्नेह करते हैं और बाहर से डाँटते हैं। इसलिए हे साधक ! उनकी डाँट तेरा हित करेगी। कभी भी अपने सद्गुरु से कतराना नहीं, गुरु से दूर जाना नहीं। गुरु के प्रसाद को पावन अंतःकरण में ठहराये बिना रुकना नहीं।

हरि सेवा कृत सौ बरस, गुरु सेवा पल चार।
तौ भी नहीं बराबरी, बेदन कियो बिचार ॥

भगवान की सेवा सौ वर्ष करे और जाग्रत सद्गुरु की सेवा केवल चार पल करे तो भी सद्गुरु-सेवा के फल की बराबरी नहीं हो सकती, ऐसा वेदों ने विचार करके कहा है।

इस प्रकार का उनका सारगर्भित उपदेश लोगों के हृदय में लोकेश्वर की प्रीति और लोकेश्वर को पाये हुए महापुरुष के ज्ञान की प्यास जगा देता था।

जैसे शुकदेवजी महाराज उस ब्रह्म-परमात्मा में एकाकार होकर निमग्न रहते थे, वैसी ही अवस्था को चरनदासजी ने पाया और चरनदासजी के कई भक्तों ने भी पाया।

गुरु की सेवा साधु जाने,
गुरु सेवा कहाँ मूढ पिछानै।

यह चरनदास महाराज की कृति है।

गुरुकृपा हि केवलं शिष्यस्य परं मंगलम्।

तो चरनदासजी को भी गुरुकृपा का महाप्रसाद प्राप्त हुआ। मुझे भी गुरुकृपा का प्रसाद प्राप्त हुआ है वरना मेरी औकात नहीं थी कि अपने मन से इतनी ऊँचाइयों का अनुभव कर लूँ। ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं : 'हे गुरुकृपा ! हे मातेश्वरी ! तू सदैव मेरे हृदय में निवास करना।'

गुरु सेवा परमातम दरशै,
त्रैगुण तजि चौथा पद परशै।

सत्त्व, रज, तम - इन तीन गुणों और जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति - इन तीन अवस्थाओं से परे चौथे परमार्थ-पद का दर्शन गुरुसेवा करा देती है। चरनदासजी के शिष्यों ने अपनी रचनाओं में उनकी अलौकिक प्रतिभा व जीवन के विषय में विस्तार से गाया है। उनकी शिष्या सहजोबाई ने तो यहाँ तक कहा कि

चरनदास पर तन मन वारूँ।
गुरु न तजूँ हरि कूँ तजि डारूँ ॥ ❐

१. गाली

परम हितैषी गुरु की वाणी बिना विचार करे शुभ जानी

(पूज्य बापूजी की अमृतवाणी)

गणेशपुरी (महाराष्ट्र) में मुक्तानंद बाबा हो गये। उनके गुरु का नाम था नित्यानंद स्वामी। नित्यानंदजी के पास एक भक्त दर्शन करने के लिए आता था। उसका नाम था देवराव। वह काननगढ़ में मास्टर था। देवराव खूब श्रद्धा-भाव से अपने गुरु को एकटक देखता रहता था।

सन् १९५५ की घटना है। वह नित्यानंदजी के पास आया और कुछ दिन रहा। बाबाजी से बोला :

''बाबा ! अब मैं जाता हूँ।''

बाबा ने कहा : ''नहीं-नहीं, अभी कुछ दिन और रहो, सप्ताह भर तो रहो।''

''बाबा ! परीक्षाएँ सामने हैं, मेरी छुट्टी नहीं है। जाना जरूरी है, अगर आज्ञा दो तो जाऊँ।''

''आज नहीं जाओ, कल जाना और स्टीमर में बैठो तो फर्स्ट क्लास की टिकट लेना। ऊपर बैठना, तलघर में नहीं, बीच में भी नहीं, एकदम ऊपर बैठना।''

''जो आज्ञा।''

एक शिष्य ने पूछा : ''बाबा ! साक्षात्कार का सबसे सरल मार्ग कौन-सा है ? हम जैसों के लिए संसार में ईश्वरप्राप्ति का रास्ता कैसे सुलभ हो ?''

बाबा ने कहा : ''सद्गुरु पर दृढ़ श्रद्धा बस !'' 'गुरुवाणी' में आता है :

सति पुरखु जिनि जानिआ
सतिगुरु तिस का नाउ।
तिस कै संगि सिखु उधरै
नानक हरिगुन गाउ॥

जिसने अष्टधा प्रकृति के द्रष्टा सत्पुरुष को पहचाना है, उसीको सद्गुरु बोलते हैं। उसके संग से सिख (शिष्य) का उद्धार हो जाता है।

बाबा ने अपने सिर से एक बाल तोड़कर उसके एक छोर को अपनी उँगली से लगाकर दिखाते हुए बोले : ''सद्गुरु के प्रति इतनी भी दृढ़ श्रद्धा हो, मतलब रत्ती भर भी दृढ़ श्रद्धा हो तो तर जायेगा। जिसने सत् को जाना है, ऐसे सद्गुरु के प्रति बाल भर भी पक्की श्रद्धा हो, उनकी आज्ञा का पालन करो तो बस हो जायेगा। कठिन नहीं है।''

संत कबीरजी ने भी कहा है :

सद्गुरु मेरा सूरमा, करे शब्द की चोट।
मारे गोला प्रेम का, हरे भरम की कोट॥
कबीर ते नर अंध हैं, गुरु को कहते और।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर॥

भक्तिमार्ग, ज्ञानमार्ग, योगमार्ग और एक ऐसा मार्ग है कि जो महापुरुषों के प्रति श्रद्धा हो और उनके वचन माने तो वह भी तर जाता है। इसको बोलते हैं संत-मत।

देवराव ने गुरुजी की आज्ञा मानी। स्टीमर में एकदम ऊपरी मंजिल की टिकट करायी। स्टीमर दरिया में चला। कुछ दूर चलने पर स्टीमर डूबने के कगार पर आ गया। कप्तान ने वायरलेस से खबर दी और मदद माँगी। मदद के लिए गोताखोर, नाव और जहाज आदि पहुँचें, उसके पहले ही तलघर में →

आत्मानंदप्राप्ति का सरल उपाय

श्री समर्थ रामदास स्वामी ने ब्रह्मज्ञानी श्री गुरुदेव की महिमा को बड़े ही रहस्यपूर्ण ढंग से गाया है :

'हे सद्गुरुदेव ! आप सुख के सागर हैं, आनंदस्वरूप हैं, आपमें दुःख का लेश भी नहीं है और आप निर्मल होकर एक का भी जहाँ अंत हो जाता है, ऐसे केवल स्वरूपानुभवरूप हैं । आप इस कलियुगरूपी गंदगी का दहन करने (कलियुग के दोषों को जलाने) में समर्थ हैं और स्वयं अगाध हैं । आप **कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुं समर्थः...** करने में, न करने में तथा अन्यथा करने में समर्थ स्वामी हैं । आपकी महिमा का अंत ब्रह्मादि देवों को भी प्राप्त नहीं होता, ऐसे आप अनंतस्वरूप हैं परंतु इतने अगाध, अपार, अनंत होते हुए भी हम जीवों पर कृपा करने के लिए प्रत्यक्ष नर रूप धारण करके नरहरि रूप से सुलभ भगवान की जय-जयकार हो ।'

जय देव जय देव जय करुणाकरा ।
आरती ओवाळूं सद्गुरु माहेरा ॥

'हे करुणा के सागर ! जीवमात्र पर दया करनेवाले सद्गुरुदेव ! आपकी जय हो, जय हो । मैं आपकी आरती उतारता हूँ क्योंकि आप मेरे पीहर हैं ।'

'हे सद्गुरुदेव ! आप हमारी माँ हैं । कन्या को ससुराल के ताप से शांति पाने के लिए पीहर (अर्थात् माँ के घर, माँ की गोद) में विश्राम मिलता है, परंतु वहाँ भी माँ का ममता-मोह रहता है, किंतु आपकी गोद में माया-मोहरहित शुद्ध एकात्म आत्मानंदरूपी विश्रांति प्राप्त होती है । आप मोहरहित माँ हैं और आपके शब्द में इतनी शक्ति है कि उसका श्रवण करने से ही ब्रह्मात्मबोध की प्राप्ति हो जाती है । फिर बोलना वृथा हो जाता है, बंद हो जाता है । गूँगे के गुड़ की तरह रसास्वादन लेते हुए यह जीव मस्त हो जाता है । इस प्रकार सद्गुरुदेव के कृपा-प्रसाद से ही आत्मानंदप्राप्ति का सहज-सरल उपाय प्राप्त हो जाता है । श्री समर्थ रामदास महाराज कहते हैं कि इसमें केवल शिष्य का सद्भाव ही फलीभूत होता है और श्री गुरुदेव पर पूरी श्रद्धा एवं प्रेम से परब्रह्म भाव से विश्वास करने से ही जीव परब्रह्म की प्राप्ति का आनंद प्राप्त कर लेता है ।' ❐

→ पानी भर गया, बीचवाले भाग में भी पानी भर गया लेकिन देवराव ने तो अपने गुरु की बात मानकर ऊपर की टिकट ली थी तो ऊपर से देखते रहे । इतने में मददगार आ गये और वे सही-सलामत बच गये । गुरु लोग वहाँ (परलोक) का तो ख्याल रखते हैं लेकिन यहाँ (इहलोक) का भी ख्याल रखते हैं । अगर कोई उनकी आज्ञा मानकर चले तो बड़ी रक्षा होती है । योग्यता का सदुपयोग करे, संसार की चीजों की चाह को महत्त्व न दे और धन, सत्ता आदि किसी बात का अभिमान न करे । बाल के अग्रभाग जितना भी यदि दृढ़तापूर्वक गुरुआज्ञा का पालन करे तो शिष्य भवसागर से पार हो जाता है । ❐

पुत्रदा एकादशी

(९ अगस्त २०११)

युधिष्ठिरजी ने पूछा : मधुसूदन ! श्रावण के शुक्ल पक्ष में किस नाम की एकादशी होती है ? कृपया उसका वर्णन कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! प्राचीनकाल की बात है । द्वापर युग के प्रारम्भ का समय था । माहिष्मतीपुर में राजा महीजित अपने राज्य का पालन करते थे किंतु उन्हें कोई पुत्र नहीं था, इसलिए वह राज्य उन्हें सुखदायक नहीं प्रतीत होता था । अपनी अवस्था अधिक देख राजा को बड़ी चिंता हुई । उन्होंने प्रजावर्ग में बैठकर इस प्रकार कहा :

''प्रजाजनो ! इस जन्म में मुझसे कोई पातक नहीं हुआ है । मैंने अपने खजाने में अन्याय का धन नहीं जमा किया है । संतों, ब्राह्मणों और देवताओं का धन भी मैंने कभी नहीं लिया है । पुत्रवत् प्रजा का पालन किया है । धर्म से पृथ्वी पर अधिकार जमाया है । दुष्टों को, चाहे वे बंधु और पुत्रों के समान ही क्यों न रहे हों, दण्ड दिया है । शिष्ट पुरुषों का सदा सम्मान किया है और किसीको द्वेष का पात्र नहीं समझा है । फिर क्या कारण है जो मेरे घर में आज तक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ ? आप लोग इसका विचार करें ।''

राजा के ये वचन सुनकर प्रजा और पुरोहितों के साथ ब्राह्मणों ने उनके हित का विचार करके गहन वन में प्रवेश किया । राजा का कल्याण चाहनेवाले वे सभी लोग इधर-उधर घूमकर ऋषिसेवित आश्रमों की तलाश करने लगे । इतने में उन्हें मुनिश्रेष्ठ लोमशजी के दर्शन हुए ।

लोमशजी धर्म के तत्त्वज्ञ, सम्पूर्ण शास्त्रों के विशिष्ट विद्वान, दीर्घायु और महात्मा हैं । उनका शरीर लोम से भरा हुआ है । वे ब्रह्माजी के समान तेजस्वी हैं । एक-एक कल्प बीतने पर उनके शरीर का एक-एक लोम विशीर्ण होता है, टूटकर गिरता है, इसीलिए उनका नाम 'लोमश' हुआ है । वे महामुनि तीनों कालों की बातें जानते हैं ।

उन्हें देखकर सब लोगों को बड़ा हर्ष हुआ । लोगों को अपने निकट आया देख लोमशजी ने पूछा : ''तुम सब लोग किसलिए यहाँ आये हो ? अपने आगमन का कारण बताओ। तुम लोगों के लिए जो हितकर कार्य होगा, उसे मैं अवश्य करूँगा।''

प्रजाजनों ने कहा : ''ब्रह्मन् ! इस समय महीजित नामवाले जो राजा हैं, उन्हें कोई पुत्र नहीं है । हम लोग उन्हींकी प्रजा हैं, जिनका उन्होंने पुत्र की भाँति पालन किया है। उन्हें पुत्रहीन देख, उनके दुःख से दुःखित हो हम तपस्या करने का दृढ़ निश्चय करके यहाँ आये हैं । द्विजोत्तम ! राजा के भाग्य से इस समय हमें आपका दर्शन मिल गया है। महापुरुषों के दर्शन से ही मनुष्यों के सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं । मुने ! अब हमें उस उपाय का उपदेश कीजिये, जिससे राजा को पुत्र की प्राप्ति हो ।''

उनकी बात सुनकर महर्षि लोमश दो घड़ी के लिए ध्यानमग्न हो गये । तत्पश्चात् राजा के प्राचीन जन्म का वृत्तांत जानकर उन्होंने कहा : ''प्रजावृंद ! सुनो, राजा महीजित पूर्वजन्म में

मनुष्यों का धन चूसनेवाला धनहीन वैश्य था । वह वैश्य गाँव-गाँव घूमकर व्यापार किया करता था। एक दिन ज्येष्ठ के शुक्ल पक्ष में दशमी तिथि को, जब दोपहर का सूर्य तप रहा था, वह किसी गाँव की सीमा में एक जलाशय पर पहुँचा । पानी से भरी हुई बावली देखकर वैश्य ने वहाँ जल पीने का विचार किया । इतने में वहाँ अपने बछड़े के साथ एक गौ भी आ पहुँची । वह प्यास से व्याकुल और ताप से पीड़ित थी, अतः बावली में जाकर जल पीने लगी । वैश्य ने पानी पीती हुई गाय को हाँककर दूर हटा दिया और स्वयं पानी पीने लगा । उसी पापकर्म के कारण राजा इस समय पुत्रहीन हुए हैं । किसी जन्म के पुण्य से उन्हें निष्कण्टक राज्य की प्राप्ति हुई है ।''

प्रजाजनों ने कहा : ''मुने ! पुराणों में उल्लेख आता है कि प्रायश्चितरूप पुण्य से पाप नष्ट होते हैं, अतः ऐसे पुण्यकर्म का उपदेश कीजिये जिससे उस पाप का नाश हो जाय ।''

लोमशजी बोले : ''प्रजाजनो ! श्रावण मास के शुक्ल पक्ष में जो एकादशी होती है, वह 'पुत्रदा' के नाम से विख्यात है । वह मनोवांछित फल प्रदान करनेवाली है । तुम लोग उसीका व्रत करो ।''

यह सुनकर प्रजाजनों ने मुनि को नमस्कार किया और नगर में आकर विधिपूर्वक 'पुत्रदा एकादशी' के व्रत का अनुष्ठान किया । उन्होंने विधिपूर्वक जागरण भी किया और उसका निर्मल पुण्य राजा को अर्पण कर दिया । तत्पश्चात् रानी ने गर्भधारण किया और प्रसव का समय आने पर बलवान पुत्र को जन्म दिया।

इस एकादशी का माहात्म्य सुनकर मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है तथा इहलोक में सुख पाकर परलोक में स्वर्गीय गति को प्राप्त होता है ।

('पद्म पुराण', उत्तरखण्ड से) ❐

[redacted]

(१)

घोर तपस्वी महामुनि थे, और महा बलिदानी ।
अपनी काया तक दे डाली, ऐसे थे वे दानी ॥
अस्थियाँ लेकर इन्द्र ने जिनकी, वज्र बनाया भारी ।
बोलो, किनके तप से सारी असुर-शक्ति थी हारी ?

(२)

हिन्दवी स्वराज्य का संस्थापक था महान ।
देश, धर्म का रक्षक था, भारत माता की शान ॥
स्वतंत्रता का, स्वाभिमान का था सुदृढ़ सेनानी ।
कहो, कौन था वीर कि जिसकी थीं आराध्य भवानी ?

(३)

जिसने राजस्थानी भू पर,
आजादी का बिगुल बजाया।
मुगलों के सम्मुख जिसने,
माथा अपना नहीं झुकाया॥
राणा सांगा का वंशज था,
वह था धीर-वीर अभिमानी ।
कहो, कौन हल्दी घाटी में,
अंकित जिसकी अमर कहानी ?

(४)

इन वीरों की वीरगाथाएँ सदा ही गायी जायेंगी ।
पर परम वीरता है आत्मसाक्षात्कार, ईश्वरप्राप्ति ।
ब्राह्मी स्थिति प्राप्त कर, कार्य रहे ना शेष ।
मोह कभी न ठग सके, इच्छा नहीं लवलेश ॥
पूर्ण गुरु किरपा मिली, पूर्ण गुरु का ज्ञान ।
आसुमल से हो गये, साँईं आशाराम ॥
बताओ ऐसा कौन पद है महान ?

अंक २२१ के 'स्वाध्याय' के उत्तर :

१. सद्गुरुओं २. ईश्वर-चिंतन ३. इन्द्रियाँ ४. इच्छा ५. गुरुमुख ६. एकादशी ७. धैर्य ८. मंगल

भगवान के भी काम आ जाओ

- पूज्य बापूजी

जिन्होंने भगवान के सत्स्वभाव को पाया है, चैतन्य स्वभाव को पाया है, आत्मानंद स्वभाव को पाया है, ऐसे सद्गुरुओं के नजरिये से ही हमारी मान्यताओं के जाले कटते हैं । नहीं तो शास्त्र और सामाजिक व्यवस्था, हमारे रीति-रिवाज की व्यवस्था हमको ऐसे बंधनों में बाँध देती है कि उधर से निकले तो उधर फँसे, एक से निकले तो दूसरे में फँसे । जैसे मकड़ी जाल बना देती है और जीवों को फँसा देती है, ऐसे ही पत्नी का अपना जाल है, पुत्र का अपना जाल है ।

बेटा कहेगा : ''पिताजी ! आपका कर्तव्य है हमें पालना; अभी मैं छोटा हूँ, पढ़-लिख लूँ फिर आप भजन करने को जाइये ।''

बाप का अपना जाल है कि 'पिता को छोड़कर कहाँ जा रहा है बेटा ? पिता की सेवा करना तुम्हारा कर्तव्य है ।' सब अपना-अपना उल्लू सीधा करने के लिए परिवारवालों को उल्लू बनाकर, नोचकर छोड़ देंगे । नेता बोलेगा : 'तुम मेरे काम में आओ ।' सब अपने-अपने काम में आपको लाकर, निचोड़कर छोड़ देंगे । जब सद्गुरु मिलेंगे तो बतायेंगे कि **'दूसरों के काम तो आ गये लेकिन दूसरों के काम वास्तव में वही आता है जो अपना काम निपटाने में सजग रहता है ।'** नहीं तो जो अपना काम निपटाने में सजग नहीं है, वह दूसरों के काम आनेवाला बनकर भी उनके प्रति वफादार नहीं रहेगा । महात्मा बुद्ध ने अपना काम निपटा लिया तो दूसरों के काम अच्छी तरह से आये । संत कबीरजी ने अपना काम निपटाया या हमने अपना काम निपटाया तो अच्छी तरह से दूसरों के काम आते हैं । अगर हम अपना काम भटका देते और किसी पदवी, प्रमाण-पत्र के पीछे लग जाते कि 'ऐसा बनूँ, ऐसा बनूँ...' तो दूसरों के काम हम इतना नहीं आ सकते थे । गरीबों में भंडारे होते हैं न, तो आदिवासी जब बाँटी हुई सामग्री ले जा रहे होते हैं, तब उनके चेहरे की रौनक देखकर लगता है कि हम जिनके काम आये उनको खुशी हो रही है ।

जब हम आपके बीच होते हैं तो चाहें तो आपसे मिलें, लाइन लगवायें । रुपये-पैसे ऐंठना हो तो खूब ऐंठ सकते हैं कि 'इस पर्व में दान का यह महत्त्व है, वह महत्त्व है... ।' लेकिन यह हम आपके धन के काम आये, आपके काम नहीं आये । हम तो आपके काम आने के लिए आपको लाइन में से, इसमें-उसमें से रोककर आप जितने भी उन्नत हो सकते हैं, उतना सब प्रकार से यत्न करते हैं ।

तो शरीर से समाज के, मन से भगवान के और एकांत-सेवन, ईश्वर-उपासना व बुद्धियोग से मनुष्य अपने-आपके काम आता है ।

शरीर से भले हम एक-दूसरे के, समाज के काम आयें लेकिन अपने को इतना घिस-पिट न डालें कि भगवान के काम न आयें । मन से भगवान के काम आ पायें इसलिए तो शरीर को थोड़ा आराम भी चाहिए, मन को शांति भी चाहिए । भगवान से प्रीति करो तो भगवान के काम आ गये ।

समाज के यथायोग्य काम आ जाओ, भूखे को अन्न, प्यासे को पानी, अविद्यावान को विद्या, नासमझ को समझ - कुल मिला के जिसको जैसे यहाँ अभी और बाद में लाभ हो, ऐसी कोशिश करना यह समाज के काम आना है । इसका मतलब यह नहीं है कि 'शराबी को अंडे और मांस चाहिए

तो उसके काम आ जाऊँ, कामी-विकारी को भोग चाहिए तो उसके काम आ जाऊँ।' यह अर्थ नहीं लगाना, शास्त्र-मर्यादा के अंदर रह के सेवा करना। किसीके काम आ जायें, तो दिवाली के दिन हैं और पाँच हजार रुपये आपको किसीको दान करने हैं। 'किसको दूँ, किसको दूँ ? अरे, पाँच हजार रुपये की फिल्म की टिकटें ले आता हूँ और रेलवे स्टेशन पर कुलियों में बाँट देता हूँ। वे बेचारे खुश हो जायेंगे, मजा आ जायेगा।' तुम्हारे पाँच हजार का तो सत्यानाश हुआ और उनके मन का, नेत्रों का और समाज का सत्यानाश हुआ। यह तुम उनके काम नहीं आये। देश, काल और पात्र देखकर दान करना चाहिए। उसको मजा आ जाय... नहीं, उसकी उन्नति हो, उसका मंगल हो। मंगल के साथ मजा आता हो तो हरकत नहीं लेकिन अमंगल करके मजा न दिलाओ।

तो शरीर से हम समाज के काम आ गये, माता-पिता, पत्नी आदि लोगों के काम आ गये। मन से हम भगवान को प्रीति करें, उन्हें अपना मानें तो भगवान के काम आ गये और बुद्धि से हम अपने आत्मदेव को जानें। सात्त्विक बुद्धि, राजसी बुद्धि और तामसी बुद्धि - ये तीन गुणोंवाली बुद्धि बदलती है लेकिन एक ऐसा तत्त्व है कि तीनों गुणों की बदलाहट को भी जानता है। ऐसा बुद्धियोग करके हम अपने-आपके काम आ जायें। और अपने-आपके काम आ गये तो नित्य नवीन रस, नित्य नवीन ज्ञान, नित्य नवीन आनंद...। फिर रस के लिए बाहर भटकना नहीं पड़ेगा। इन्द्र कहते हैं कि 'ऐसे आत्मवेत्ता सद्गुरु मिल जायें तो परम सौभाग्य की बात है। मुझे सुख लेना है तो अप्सराएँ नाचें, गंधर्व गायें, साजी साज बजायें तब सुख मिलता है, लेकिन जिसने अपने-आपको पा लिया है, जो अपने-आपके काम आ गया है ऐसे महापुरुष की दृष्टि पड़ती है तो मनुष्य को आत्मा का नित्य नवीन रस मिलने लगता है। जैसे चन्द्रमा की नित्य नवीन शीतलता होती है, उससे अनंत गुना नित्य नवीन परमात्म-रस, परमात्म-ज्ञान, परमात्म-प्रेम उन महापुरुष के हृदय में उमड़ता रहता है। चन्द्रमा औषधि को पुष्ट करता है लेकिन महापुरुषों की वाणी और दृष्टि हमको पुष्ट करती है।' ❐

एक अत्यंत सफल, प्रसिद्ध एवं लोकहित में रत महानुभाव दिखने में जरा कुरूप थे। वे सदा अपने पास एक दर्पण रखते थे और दिन में कई बार उसे हाथ में लेकर उसमें अपना चेहरा देखा करते थे। इससे देखनेवालों के मन में यह जिज्ञासा बनी रहती थी कि 'इस तरह बार-बार दर्पण देखने का क्या राज है ?'

उनके एक निकट के मित्र से रहा नहीं गया तो उसने इसका कारण पूछ ही लिया। उन्होंने विनम्र भाव से उत्तर दिया : ''मैं यह सोचता रहता हूँ कि ईश्वर ने मुझे ऐसा शरीर दिया है तो मैं अब अपने अच्छे कार्यों के द्वारा जगत को ऐसा कुछ दूँ, जो जगत के लिए एक आदर्श बन जाय। रूपवान लोगों को भी दर्पण देखकर सदा यह विचार करना चाहिए कि मेरे द्वारा ऐसा कोई कार्य न हो जाय, जिससे प्रकृति की यह अनुपम देन कलंकित हो जाय।''

उन महानुभाव का 'दर्पण-दर्शन' हम सबको सदैव सदाचरण की प्रेरणा देता है।

आप लोग भी या तो रूपवान होंगे या नहीं होंगे। यदि रूपवान हैं तो सोचना कि भगवान ने मुझे ऐसा सुंदर रूप दिया है तो मुझसे कोई असुंदर कार्य न हो और यदि रूपवान नहीं हैं तो सोचना कि रूप सुंदर नहीं तो क्या, मैं सुंदर कार्य ही करूँगा। भगवान के नाते भगवान के लिए ही कार्य करूँगा। परहित के कार्य करूँगा। ❐

जीवन-संजीवनी

- श्री परमहंस अवतारजी महाराज

❊ जो लोग गुरुमति (गुरु की आज्ञा) और नाम-अभ्यास को छोड़कर मन के विचारानुसार कर्म करते हैं वे कर्मफल से नहीं बच सकते ।

❊ पूरे सद्गुरु का हाथ अखण्ड ब्रह्माण्डों तक पहुँचता है । वे अपने सच्चे सेवक की लोक-परलोक में सहायता करते हैं ।

❊ सच्चे सेवक हर पल ईश्वर को याद करते हैं, इसलिए अंत समय यमदूत उनके निकट नहीं आ सकते ।

❊ सद्गुरु की आज्ञा सत्य-सत्य कर मानना ही ईश्वरीय आज्ञा का पालन करना है ।

❊ तुम नाम का सुमिरन करोगे तो सद्गुरु की वास्तविक शक्ति को जानोगे और हार्दिक आभार मानोगे ।

❊ पूर्ण सद्गुरु अभ्यास का सरल-से-सरल साधन बतलाते हैं, जो कि अति फलदायक होता है । उसे करने में कोई कठिनाई या भय नहीं होता और उसे प्रत्येक प्राणी हर समय कर सकता है ।

❊ जब झूठी माया के लिए तन-मन-धन की कुर्बानी देनी पड़ती है तो सच्चे प्रभु को तन-मन-धन दिये बिना कैसे प्राप्त करोगे !

❊ शब्दाभ्यास (भगवन्नाम-जप) से ही अमर पद प्राप्त किया जा सकता है ।

❊ आंतरिक नेत्र खुले हुए हों तो अपने-पराये की पहचान हो, नहीं तो मनुष्य अंधे के समान परखशक्ति खोकर सद्गुरु, जो वास्तव में अपने हैं, उन्हें बेगाना और स्वार्थियों को अपना समझता है ।

❊ ईश निमित्त कार्य करो तो कर्मबंधन में नहीं बाँधे जाओगे । स्वयं को कर्ता समझोगे तो फल अवश्य भोगना पड़ेगा ।

❊ दातार की देन को प्राप्त कर उसका गलत उपयोग मत करो अर्थात् दातार को भूलकर अभिमान न करो और दूसरों को दुःखी न करो ।

❊ तुम जो कुछ भी करते या सोचते हो उसे तुम्हारा अंतरात्मा परमेश्वर जानता है । उसकी प्रसन्नता हेतु कर्म भी करो और विचार भी करो ।

❊ यदि परमार्थ में सफलता प्राप्त करना चाहते हो तो सरल स्वभाववाले और सत्यवादी बनो । सद्गुरु की आज्ञा में मन की न चलाओ और अपनी चतुराई भी न दर्शाओ ।

❊ दूसरों की बड़ाई देखकर उनसे ईर्ष्या न करो और न ही अपनी शक्ति को उनके विरोध में व्यर्थ नष्ट करो, अपितु अपनी वास्तविक आत्म-उन्नति में लगो । दूसरों को गिराकर स्वयं को आगे बढ़ाओगे तो वह बड़ाई स्थिर नहीं रहेगी ।

❊ पदवी या कुर्सी के लिए इच्छा या प्रयत्न न करो । तन-मन-धन से सत्पुरुषों की सेवा करो तो बड़ाई तुम्हारे पीछे स्वतः आयेगी । तुम उसके पीछे मत पड़ो ।

❊ अपने गुनाहों के लिए हार्दिक पश्चात्ताप करो । यदि उनके लिए तुम्हारे हृदय में घृणा नहीं उत्पन्न हुई तो इसका अर्थ यह है कि पश्चात्ताप पूर्णतः नहीं किया है । पश्चात्ताप करो परंतु घबराओ नहीं ।

❊ दातार की देनों का स्मरण कर उसे पल-पल में धन्यवाद दो और आभार मानो ।

❊ तुम अपना मूल्यांकन करो कि तुममें गुरुचरणों के प्रति प्रेम बढ़ रहा है या मायावी मोह ? सद्गुरु का प्रेम तुम्हें परम पद तक ले जायेगा और मायावी मोह चौरासी के चक्कर में डालेगा । ❐

व्यासपूर्णिमा का इतिहास

(व्यासपूर्णिमा पर विशेष)

आषाढ़ मास में आनेवाली पूर्णिमा को 'व्यासपूर्णिमा' कहा जाता है । इसे 'गुरुपूर्णिमा' भी कहते हैं । व्यासपूर्णिमा सनातन सत्य से जुड़ने में सहायता करनेवाली पूर्णिमा है । अज्ञान, मूढ़ता मिटा के आत्मज्ञान में जगा दे, लघु में से गुरु, विभु बना दे, लघु देह में से 'मैं' हटाकर ब्रह्म में 'मैं' की प्रतिष्ठा करा दे, ऐसा यह एक अपूर्व आध्यात्मिक पर्व है । इससे संबंधित एक कथा 'ब्रह्माण्ड पुराण' में आती है, जो देवर्षि नारदजी ने वैशम्पायनजी से कही थी -

वाराणसी में वेदनिधि नामक एक ब्राह्मण रहते थे, जिनकी पत्नी का नाम वेदवती था । वेदनिधि सम्पदा से तो गरीब थे परंतु भक्ति, शास्त्रज्ञान और तप से धनवान थे । उन्हें एक ही दुःख था कि बहुत समय बीतने के बाद भी कोई संतान नहीं हुई थी ।

एक दिन वेदनिधि को मालूम पड़ा कि महर्षि वेदव्यासजी एक वृद्ध ब्राह्मण के रूप में रोज गंगा-स्नान के लिए आते हैं ।

गंगाजी तो पापियों के पाप-ताप नष्ट करती हैं लेकिन तीर्थों को भी तीर्थत्व प्रदान करनेवाले आत्मज्ञानी महापुरुष गंगाजी को पावन करने के लिए गंगा में गोता मारते हैं । **तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि ।**

(नारदभक्तिसूत्र : ६९)

वेदनिधि यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और अगले दिन जिस मार्ग से व्यासजी गंगा-स्नान के लिए जाते थे, वहाँ जाकर खड़े हो गये । ब्राह्ममुहूर्त का समय था । लाठी टेकते हुए एक वृद्ध ब्राह्मण स्नान के लिए आते दिखाई दिये । वेदनिधि उनके चरणों में साष्टांग दण्डवत् पड़ गये ।

वृद्ध ब्राह्मण : ''ब्राह्मणदेव ! आप यह क्या कर रहे हैं ?''

वेदनिधि : ''प्रभु ! मैं जानता हूँ कि आप साक्षात् महर्षि वेदव्यासजी हैं । मैं आपके शरणागत हूँ, अब आप मुझ पर अनुग्रह कीजिये ।''

व्यासजी प्रसन्नमुद्रा में उन्हें उठाते हुए बोले : ''ब्राह्मणदेव ! आप क्या चाहते हैं ? माँग लीजिये ।''

''भगवन् ! कल मेरे पिताजी का श्राद्ध है । कृपा करके ब्राह्मण-भोजन के लिए मेरे घर पधारें ।''

व्यासजी अपनी सहमति देकर चले गये । वेदनिधि घर गये । अगले दिन सुबह उनकी धर्मपत्नी वेदवती ने पवित्र होकर सामर्थ्य-अनुसार सुंदर, स्वादिष्ट व्यंजन तैयार किये । कुछ ही क्षण पश्चात् ब्राह्मणरूपधारी वेदव्यासजी पधारे । वेदनिधि ने उन्हें आसन पर बिठाकर अर्घ्य-पाद्य से उनका पूजन किया और श्राद्ध-कर्म के पश्चात् भोजन कराया ।

व्यासजी वेदनिधि पर प्रसन्न हुए और वर माँगने को कहा । वेदनिधि बोले : ''प्रभु ! मुझे एक ही कष्ट है कि घर में कोई संतान नहीं है ।''

व्यासजी आशीर्वाद देते हुए बोले : ''तुम्हें दस संतानें होंगी, जो साधारण नहीं बल्कि तेजवान, ऐश्वर्यवान और भाग्यवान होंगी । साथ ही तुम्हें जीवन में किसी चीज की कमी नहीं होगी और अंत में उत्तम गति की प्राप्ति कर लोगे ।''

व्यासजी विदा लेने को तैयार हुए, तब वेदनिधि ने पुनः प्रार्थना की : ''हे भगवन् ! मुझे आपके सत्संग-दर्शन का लाभ पुनः कब होगा ?''

भगवान वेदव्यासजी बोले :

शृणु विप्र रतेच्छाचेत् दर्शनार्थं दतात्वया ।
पूजनीया विशेषेण कथावाचइता स्वयम् ॥

''हे ब्राह्मणोत्तम ! आप मेरे दर्शन के लिए अत्यंत लालायित हैं । सुनिये, भगवत्कथाओं के गूढ़ अर्थों (तात्त्विक रहस्यों) का उपदेश देनेवाले सत्संगकर्ता महापुरुषों के रूप में मैं स्वयं विद्यमान रहता हूँ । इसलिए वे सभीके द्वारा विशेषरूप से पूजनीय हैं ।''

अतः आषाढ़ मास की पूर्णिमा को सद्गुरु-पूजन कर व्यासस्वरूप अपने सद्गुरु का सम्मान किया जाता है । धूप, दीप, नैवेद्य आदि के द्वारा उनकी पूजा की जाती है । **उनका मानसिक पूजन तो और भी श्रेष्ठ माना गया है ।** (मानसिक पूजन की विधि आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'गुरु आराधनावली' में दी गयी है ।) यही गुरुपूजा आषाढ़ी पूर्णिमा अर्थात् गुरुपूर्णिमा के दिन आज भी धूमधाम से हो रही है ।

द्विजश्रेष्ठ वेदनिधि ने पुनः प्रश्न किया :

कदा संपूजनीयश्च कस्मिन् मासे दिने कदा ।
केन केन प्रकारेण वदस्व ममाग्रतः ॥

''हे महात्मन् ! मैं आपकी पूजा कब, किस मास में, किस दिन तथा किस-किस प्रकार से करूँ ? यह सब बताने की कृपा करें ।''

वेदव्यासजी बोले :

मम जन्मदिने सम्यक् पूजनीयः प्रयत्नतः आषाढ़ शुक्लपक्षे तु पूर्णिमायां गुरौ तथा पूजनीयो विशेषेण, वस्त्राभरणधेनुभिः दक्षिणाभिः सुपुष्ठाभिः मत्स्वरूपं प्रपूजयेत् । एवं कृतं त्वया विप्र मत्स्वरूपस्य दर्शनं भविष्यति, न संदेहो मयैवोक्तं द्विजोत्तम ।

''हे द्विजोत्तम ! मेरे जन्म की इस पुण्यमयी तिथि को प्रमादरहित होकर, श्रद्धा और भक्ति के साथ भली प्रकार पूजा करनी चाहिए । आषाढ़ी पूर्णिमा तथा गुरुवार को वस्त्र, आभूषण, गौ-दान एवं दक्षिणा के साथ अर्घ्य-पाद्य सहित परिपूर्ण रूप में मेरे रूप की पूजा और ध्यान करना चाहिए । जो भी इस दिन इस प्रकार पूजा और ध्यान करेंगे, उनको प्रत्यक्ष रूप से मेरे स्वरूप का साक्षात्कार होगा, इसमें संदेह नहीं ।''

यह कथा सुनकर वैशम्पायनजी ने सत्संगकर्ता देवर्षि नारदजी को अपना गुरु मान लिया और व्यासजी के रूप में उनकी पूजा कर उनके द्वारा गुरु-अनुग्रह प्राप्त किया । 'स्वधर्मसिंधु' नामक ग्रंथ में भी इस प्रसंग का उल्लेख आता है ।

'निर्णयसिंधु' में भी व्यासपूर्णिमा की विशेषता के बारे में कहा गया है । उसमें गुरुपूर्णिमा की महिमा और गुरुपूजा के फल के बारे में विशेषरूप से बताया गया है ।

जो आध्यात्मिक रहस्यों के बारे में या परम गुरुओं की जीवन्मुक्त दशा के बारे में जिज्ञासा रखते हैं या गुरुतत्त्व का साक्षात्कार करना चाहते हैं, उनके लिए आषाढ़ी पूर्णिमा प्रमुख दिन है । महर्षि व्यासजी की यह जन्मतिथि गुरुपूजा-महोत्सव का पावन दिन है, गुरु-संदेश के माध्यम से जीवन के सर्वांगीण विकास की कला प्राप्त करने का मंगलमय अवसर है । ❐

सद्गुरु

गुरुदेव अद्भुत रूप हैं, परधाम माहिं विराजते ।
उपदेश देने सत्य का, इस लोक में आ जावते ॥
दुर्गम्य का अनुभव करा, भय से परे ले जावते ।
पर धाम में पहुँचाय कर, स्वराज्य पद दिलवावते ॥
छुड़वाय कर सब कामना, कर देय हैं निष्कामना ।
सब कामनाओं का बता घर, पूर्ण करते कामना ॥
मिथ्या विषय सुख से हटा, सुख सिन्धु देते हैं बता ।
सुख सिन्धु जल से पूर्ण, अपना आप देते हैं जता ॥

- श्री भोले बाबाजी

सेवा तो सेवा ही है !

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

सेवक को जो मिलता है वह बड़े-बड़े तपस्वियों को भी नहीं मिलता । हिरण्यकशिपु तपस्वी था, सोने का हिरण्यपुर मिला लेकिन सेविका शबरी को जो साकार, निराकार राम का सुख मिला वह हिरण्यकशिपु ने कहाँ देखा, रावण ने कहाँ पाया ! मुझे मेरे गुरुदेव और उनके दैवी कार्य की सेवा से जो मिला है, वह बेचारे रावण को कहाँ था ! सेवक को जो मिलता है उसका कोई बयान नहीं कर सकता लेकिन सेवक ईमानदारी से सेवा करे, दिखावटी सेवक तो कई आये, कई गये। बहाने बनानेवाले सेवक घुस जाते हैं न, तो गड़बड़ी करते हैं ।

'ऋषि प्रसाद' में जो सच्चे हृदय से सेवा करेगा तो उसका उद्देश्य होगा कि हम क्या चाहते हैं वह नहीं, वे क्या चाहते हैं और उनका कैसे मंगल हो - सेवक का यह उद्देश्य होता है। आप क्या चाहते हो और आपका कैसे मंगल हो - यह मेरी सेवा का उद्देश्य होना चाहिए। आपको पटाकर दान-दक्षिणा ले लूँ तो सेवा के बहाने मैं जन्म-मरण के चक्कर में जा रहा हूँ । सेवा में बड़ी सावधानी चाहिए। जो प्रेमी होता है, जिसके जीवन में सद्गुरुओं का सत्संग होता है, मंत्रदीक्षा होती है, भगवान का और मनुष्य-जीवन का महत्त्व समझता है वही सेवा से लाभ उठाता है। बाकी के सेवा से लाभ क्या उठाते हैं, सेवा से मुसीबत मोल लेते हैं । 'मैं फलाना हूँ, मैं फलाना हूँ...' करके वासना बढ़ाते हैं और संसार में डूब मरते हैं। जो सेवा संसार में डुबा दे, वह सेवा नहीं है। वह तो मुसीबत बुलानेवाली चालाकी है। जो संसार की आसक्ति मिटाकर 'अपने लिए कुछ नहीं चाहिए। अपना शरीर भी नहीं रहेगा। हम दूसरों के काम आयें।' तो अपने-आप....

अपनी चाह छोड़ दे, दूसरे की भलाई में ईमानदारी से लग जाय तो उसके दोनों हाथों में लड्डू ! यहाँ भी मौज, वहाँ भी मौज !

पूरे हैं वे मर्द जो हर हाल में खुश हैं ।

तो माँ की, पति की, पत्नी की, समाज की सेवा करे लेकिन बदला न चाहे तो उसका कर्मयोग हो जायेगा, उसकी भक्ति में योग आ जायेगा, उसके ज्ञान में भगवान का योग आ जायेगा। उसके जीवन में सभी क्षेत्रों में आनंद है ।

'क्या करें, मुझे सफलता नहीं मिलती...' तो टट्टू ! तू सफलता के लिए ही करता है, वाहवाही के लिए करता है । जिसमें जितना वाहवाही का स्वार्थ होता है उतना ही वह विफल होता है और जितना दूसरे की भलाई का उद्देश्य होता है उतना ही वह सफल होता है। 'मैं सफल नहीं होता हूँ, मैं सफल नहीं होता हूँ...' होगा भी नहीं । स्वार्थी आदमी क्या सफल होंगे ! स्वार्थ में कितने ही सफल दिखें, फिर भी अंदर से अशांत होंगे। शराब पीकर और क्लबों में जाकर सुख ढूँढ़ेंगे । क्या खाक तुमने सेवा की !

सेवा तो शबरी की है, सेवा तो रामजी की है, सेवा तो श्रीकृष्ण की है, सेवा तो कबीरजी की है और सेवा तो ऋषि प्रसादवालों की है, अन्य सेवकों की है। यह सोचकर बड़े पद पर बैठ गया कि बड़ी सेवा करेंगे तो यह बेईमानी है। सेवक को किसी पद की जरूरत नहीं है। सारे पद सच्चे सेवक के आगे-पीछे घूमते हैं। कोई बड़ा पद लेकर सेवा करना चाहता हो, बिल्कुल झूठी बात है । सेवा में जो अधिकार चाहता है वह वासनावान होकर **(शेष पृष्ठ २९ पर)**

कामिका एकादशी

(२६ जुलाई २०११)

युधिष्ठिरजी ने पूछा : गोविंद ! वासुदेव ! आपको मेरा नमस्कार है। श्रावण (गुजरात-महाराष्ट्र के अनुसार आषाढ़) के कृष्ण पक्ष में कौन-सी एकादशी होती है ? कृपया उसका वर्णन कीजिये।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! सुनो। मैं तुम्हें एक पापनाशक उपाख्यान सुनाता हूँ, जिसे पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने नारदजी के पूछने पर कहा था।

नारदजी ने प्रश्न किया : हे भगवन् ! हे कमलासन ! मैं आपसे यह सुनना चाहता हूँ कि श्रावण के कृष्ण पक्ष में जो एकादशी होती है, उसका क्या नाम है ? उसके देवता कौन हैं तथा उससे कौन-सा पुण्य होता है ? प्रभो ! यह सब बताइये।

ब्रह्माजी ने कहा : नारद ! सुनो, मैं सम्पूर्ण लोकों के हित की इच्छा से तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दे रहा हूँ। श्रावण मास में जो कृष्ण पक्ष की एकादशी होती है, उसका नाम 'कामिका' है। उसके स्मरणमात्र से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है। उस दिन श्रीधर, हरि, विष्णु, माधव और मधुसूदन आदि नामों से भगवान का पूजन करना चाहिए। भगवान के पूजन से जो फल मिलता है, वह गंगा, काशी, नैमिषारण्य तथा पुष्कर क्षेत्र में भी सुलभ नहीं है। सिंह राशि के बृहस्पति होने पर तथा व्यतीपात और दण्डयोग में गोदावरी-स्नान से जिस फल की प्राप्ति होती है, वही फल भगवान श्रीकृष्ण के पूजन से भी मिलता है।

जो समुद्र और वन सहित समूची पृथ्वी का दान करता है तथा जो 'कामिका एकादशी' का व्रत करता है, वे दोनों समान फल के भागी माने गये हैं।

जो ब्यायी हुई गाय को अन्यान्य सामग्रियों सहित दान करता है, उस मनुष्य को जिस फल की प्राप्ति होती है, वही 'कामिका एकादशी' का व्रत करनेवाले को मिलता है। जो नरश्रेष्ठ श्रावण मास में भगवान श्रीधर का पूजन करता है, उसके द्वारा गंधर्वों और नागों सहित सम्पूर्ण देवताओं की पूजा हो जाती है।

अतः पापभीरु (पाप से भय रखनेवाले) मनुष्यों को यथाशक्ति पूरा प्रयत्न करके 'कामिका एकादशी' के दिन श्रीहरि का पूजन करना चाहिए। जो पापरूपी पंक से भरे हुए संसार-समुद्र में डूब रहे हैं, उनका उद्धार करने के लिए 'कामिका एकादशी' का व्रत सबसे उत्तम है। अध्यात्मविद्या परायण पुरुषों को जिस फल की प्राप्ति होती है, उससे बहुत अधिक फल 'कामिका एकादशी' व्रत का सेवन करनेवालों को मिलता है।

'कामिका एकादशी' का व्रत करनेवाला मनुष्य रात्रि में जागरण करके न तो कभी भयंकर यमदूत का दर्शन करता है और न कभी दुर्गति में ही पड़ता है।

लालमणि, मोती, वैदूर्य और मूँगे आदि से पूजित होकर भी भगवान विष्णु वैसे संतुष्ट नहीं होते, जैसे तुलसीदल से पूजित होने पर होते हैं। जिसने तुलसी की मंजरियों से श्री केशव का पूजन कर लिया है, उसके जन्म भर का पाप निश्चय ही नष्ट हो जाता है।

या दृष्टा निखिलाघसंघशमनी स्पृष्टा वपुष्पावनी रोगाणामभिवन्दिता निरसनी सिक्तान्तकत्रासिनी। प्रत्यासत्तिविधायिनी भगवतः कृष्णस्य संरोपिता न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुलस्यै नमः ॥

'जो दर्शन करने पर सारे पाप-समुदाय का नाश कर देती है, स्पर्श करने पर शरीर को पवित्र बनाती है, प्रणाम करने पर रोगों का निवारण करती है, जल से सींचने पर यमराज को भी भय पहुँचाती है, आरोपित करने पर भगवान श्रीकृष्ण के समीप ले जाती है और भगवान के चरणों में चढ़ाने पर

मोक्षरूपी फल प्रदान करती है, उस तुलसी देवी को नमस्कार है !' **(पद्म पुराण, उ. खं. : ५६.२२)**

जो मनुष्य एकादशी को दिन-रात दीपदान करता है, उसके पुण्य की संख्या चित्रगुप्त भी नहीं जानते । एकादशी के दिन भगवान श्रीकृष्ण के सम्मुख जिसका दीपक जलता है, उसके पितर स्वर्गलोक में स्थित होकर अमृतपान से तृप्त होते हैं । घी या तिल के तेल से भगवान के सामने दीपक जलाकर मनुष्य देहत्याग के पश्चात् करोड़ों दीपकों से पूजित हो स्वर्गलोक में जाता है ।'

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : युधिष्ठिर ! तुम्हारे सामने यह मैंने 'कामिका एकादशी' की महिमा का वर्णन किया है। 'कामिका' सब पातकों को हरनेवाली है, अतः मानवों को इसका व्रत अवश्य करना चाहिए । यह स्वर्गलोक तथा महान पुण्यफल प्रदान करनेवाली है । जो मनुष्य श्रद्धा के साथ इसका माहात्म्य श्रवण करता है, वह सब पापों से मुक्त हो श्री विष्णुलोक में जाता है । **('पद्म पुराण' से)** ❐

(पृष्ठ २७ से 'सेवा तो सेवा ही है' का शेष) जगत का मोही हो जायेगा । लेकिन सेवा में जो अपना अहं मिटाकर तन से, मन से, विचारों से दूसरे की भलाई, दूसरे का मंगल करता है और मान मिले, चाहे अपमान मिले उसकी परवाह नहीं करता, ऐसे हनुमानजी जैसे सेवक की 'हनुमान जयंती' मनायी जाती है। हनुमानजी देखो तो जहाँ छोटा बनना है छोटे और जहाँ बड़ा बनना है बड़े बन जाते हैं। सेवक अपने स्वामी का, गुरु का, संस्कृति का काम करे तो उसमें लज्जा किस बात की ! सफलता का अहंकार क्यों करे, मान-अपमान का महत्त्व क्या है !

'ऋषि प्रसाद' बाँटनेवाले को मान-अपमान थोड़े ही प्रभावित करता है ! मान मिला वहाँ ऋषि प्रसाद का सदस्य बनाने गया, मान नहीं मिला तो नहीं गया तो वह सेवक नहीं है, वह तो मान का भोगी है । चाहे मान मिले या अपमान मिले, यश मिले या अपयश मिले, सेवा तो सेवा ही है ! ❐

श्रद्धा-भाव

कलियुग में पाक पीर हैं आशारामजी बापू ।
पहुँचे हुए फकीर हैं आशारामजी बापू ॥
संसार में हैं संत-महात्मा तो एक से एक ।
पर संत बे-नजीर[१] हैं आशारामजी बापू ॥
दर्शन से जिनके होती हैं आँखें पवित्र ये ।
ऐसा लिये शरीर हैं आशारामजी बापू ॥
हरि ॐ बोलो हरि ॐ, हरि ॐ हर घड़ी ।
फरमाये तकरीर[२] हैं आशारामजी बापू ॥
श्रद्धा है जिनकी आपमें वो मानते हैं ये ।
रोशन दिलो-जमीर हैं आशारामजी बापू ॥
टाटा हो चाहे बिरला हो, अध्यात्म में मगर ।
सबसे बड़े अमीर हैं आशारामजी बापू ॥
खुशबू है जिनकी धर्म के हर एक क्षेत्र में ।
वो गुल हैं वो अबीर हैं आशारामजी बापू ॥
जो हों अभागे, आयें और भाग्य की करायें ।
सीधी किये लकीर हैं आशारामजी बापू ॥
आशीष लेने आपके ये आम जन ही क्या !
आते शहो-वजीर हैं, आशारामजी बापू ॥
हर वर्ग का है आदमी आश्रम में आपके ।
हैं आज के कबीर श्री आशारामजी बापू ॥
निष्पक्ष और निर्भय प्रवचन हैं आपके ।
हैं वीर-महावीर श्री आशारामजी बापू ॥
एक पल में भेद दें जो हर मन की मैल को ।
वो रामजी के तीर हैं आशारामजी बापू ॥
भक्ति की प्यास है जिन्हें, उनके लिए तो आप ।
गंगो-जमन के नीर हैं आशारामजी बापू ॥
जो धर्म से हों निर्धन वो धर्म-धन ले जायें ।
देने को खुद अधीर हैं आशारामजी बापू ॥
निश्चिंत वो रहें उन्हें निश्चित मिलेगी मंजिल ।
जिस कारवाँ के मीर[३] हैं आशारामजी बापू ॥
जो चाहे आये, ले ले गुरुदीक्षा आपसे ।
दुनिया के दस्तगीर[४] हैं आशारामजी बापू ॥
धर्मी तमाम कहते हैं धर्मी-धरा के आप ।
हैं गुल इस गुलिस्ताँ के आशारामजी बापू ॥
जीवन में जो अशांत हैं सत्संग में आयें वो ।
इक स्वर्ग की समीर हैं आशारामजी बापू ॥
जो दें 'शमीम' मोक्ष की राहों में रोशनी ।
कामिल[५] वो मह[६]-मुनीर[७] हैं आशारामजी बापू ॥

- शमीमुद्दीन कुरेशी, रतलाम (म.प्र.).

१. बेमिसाल २. उपदेश ३. नायक ४. सँभालनेवाले ५. पूर्ण ६. चाँद ७. उज्ज्वल

स्वास्थ्य के कुछ सरल प्रयोग

पाचनशक्ति बढ़ाने के लिए : रबड़ का काला, दानेदार पायदान आता है, जिसमें बड़े-बड़े गोल छेद होते हैं और दूसरी तरफ छोटे-छोटे दाने होते हैं। उस पायदान पर पहले गोल सुराख की तरफ ५ मिनट खड़े रहें, फिर दूसरी तरफ दानेदार भाग पर खड़े रहकर पैरों का एक्यूप्रेशर करने से पेट, पाचनतंत्र व बुढ़ापे की अन्य कमजोरियाँ दूर होती हैं। पाचनशक्ति ठीक होने से बहुत सारी बीमारियाँ ठीक हो जाती हैं। जो तेल-मालिश करते हैं वे मालिश के बाद यह प्रयोग करें।

पाचनतंत्र के लिए वरदान : जठराग्नि प्रदीप्त करने के लिए पाचक रस ज्यादा चाहिए, जिससे जठराग्नि आम (कच्चा रस) को पचा लेती है। यदि शरीर में से आम निकालना हो तो एक मीठे सेवफल में जितने लगा सको उतने लौंग अंदर भोंक दो, फिर उसे ७ से ११ दिन तक छाया में पड़ा रहने दो। सेव सड़ जायेगा और लौंग मुलायम हो जायेंगी। वह लौंग बन गयी पाचनतंत्र को तेज करनेवाली औषधि, टॉनिक। यह पाचनतंत्र के लिए एकदम वरदान है।

मात्रा : रोज १-२ लौंग भोजन के २-४ घंटे बाद चूसें।

एलर्जीनाशक : ६० ग्राम चिरायता को १ लीटर पानी में उबालें। जब एक चौथाई पानी शेष बचे तब इसे छानकर रख लें। सुबह-शाम २००-२५० मि.ली. ७ दिनों तक सेवन करने से अंग्रेजी दवाओं से शरीर पर हुए दुष्प्रभाव दूर होते हैं।

बुद्धिवर्धक : १० ग्राम दालचीनी, १० ग्राम शंखावली तथा १०० ग्राम मिश्री तीनों को बारीक पीसकर रख लें। रोज ३ से ५ ग्राम चूर्ण दूध के साथ सेवन करने से बुद्धि व स्मरणशक्ति में वृद्धि होती है।

मधुमेह : ❊ आधा किलो करेले काटकर तसले में रखें और पैरों तले एक घंटा कुचलें, जब तक कि मुँह कड़वा न हो जाय। ७ से १० दिन में लाभ होगा।

❊ बेलपत्र की ११ पत्तियाँ (एक में तीन अर्थात् ३३ पत्तियाँ) डंठलसहित ५० ग्राम पानी में ३-४ काली मिर्च के साथ पीस लें, फिर इसे छानकर सुबह खाली पेट पियें। मधुमेह में यह प्रयोग ४० दिन तक करने से रक्त में शर्करा नियंत्रित हो जाती है, इंसुलिन के इंजेक्शन नहीं लेने पड़ते।

मूत्रावरोध : केले के तने का ५० ग्राम रस २५ ग्राम घी में मिलाकर पिलायें। यह बंद पेशाब खोलने का उत्तम उपचार है। इसके रस में मिला हुआ घी पेट में ठहर नहीं सकता, अतः मूत्र शीघ्र आ जाता है।

मोच : अलसी का तेल गर्म करके लगायें। ❐

गिलोय रसायन

लाभ : यह जरावस्था को दूर करनेवाला, बुद्धिदायक, त्रिदोषनाशक उत्कृष्ट रसायन है। इसके निरंतर सेवन से आयु की वृद्धि होती है तथा व्याधियाँ उत्पन्न नहीं होतीं। बालों का सफेद होना, ज्वर, विषम ज्वर व प्रमेह दूर होता है।

विधि : १०० ग्राम गिलोय का कपड़छन चूर्ण, १६-१६ ग्राम पुराना देशी गुड़ व शहद, २० ग्राम गाय का घी - इन सबको मिलाकर रख लें। यह 'अमृत-रस' है। ६ ग्राम प्रतिदिन गौदुग्ध के साथ सेवन करें।

सावधानी : यह रसायन १५ वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों के लिए है।

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

उत्तराखण्ड की पहाड़ियाँ इस बार मानसून आने के पहले ही सत्संग-वर्षा में सराबोर हो गयीं। देवभूमि पर पूज्य बापूजी के आगमन से, देवता भी जिसके लिए लालायित रहते हैं ऐसे सत्संग - ध्यानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग का परम लाभ पहाड़ के वासियों को मिला।

२८ मई को **ऋषिकेश** की पावन धरा पर जीवन में से राग-द्वेष का जहर मिटाकर प्रेम का अमृत पिलानेवाली बापूजी की वाणी से यहाँ की जनता सौभाग्यवान हुई। बापूजी ने कहा : ''राग-द्वेष को मारना है तो जिसके प्रति द्वेष है उसके प्रति मधुरता लाओ और जिसके प्रति राग है उसके प्रति विवेक जगाकर वैराग्य लाओ। राग की जगह पर वैराग्य और द्वेष की जगह पर प्रेम लाने से राग-द्वेष मरेंगे, अन्यथा नहीं मरेंगे।''

२९ मई को **देहरादून** में सत्संग सम्पन्न हुआ। पूज्य बापूजी बोले : 'गु' माना अंधकार, 'रु' माना प्रकाश। परमात्मा की चेतना पर जो नासमझी का अंधकार पड़ा है, उसको हटाकर, अंधकार मिटाकर परमात्म-प्रकाश करवा दें उन्हींका नाम है 'गुरु'। मंगल तो देवी-देवता भी कर लेंगे लेकिन पुण्य नष्ट होते ही फिर अमंगल ! पर गुरुजी जब मंगल करेंगे तो पाप-पुण्य से परे जो अपना आत्मस्वभाव है उसमें जग जायेंगे। कर्तृत्व-भोक्तृत्व का भ्रम मिट जायेगा।

३० मई को **टिहरी** के रमणीय वातावरण में ईश्वर के परम रमणीय ज्ञान में, स्मृति में अवगाहन कराते हुए बापूजी बोले :

''बाहर की कोई चीज, अवस्था, गाँव, गलियारा अच्छा लगता है तो गहराई से चिंतन करो तो पाओगे कि उसके पीछे अच्छे-में-अच्छा वह चैतन्य परमात्मा है। मन को अनुकूल लगता है उसको भी जानता है, प्रतिकूल लगता है उसको भी जानता है। अनुकूलता-प्रतिकूलता दोनों आकर मिट जाती हैं, फिर भी जो नहीं मिटती है, वह सत्-चित्-आनंद परमात्मसत्ता है।''

३१ मई को **उत्तरकाशी, १ जून** को **गंगोत्री** तथा **२ जून** को **पुरौला** में भी सत्संग-प्रवचनों का लाभ उत्तराखण्ड की जनता को प्राप्त हुआ। दैवी सम्पदा का सृजन करते हुए बापूजी के सत्संग ने यहाँ के निवासियों को स्वस्थ, सुखी, सम्मानित जीवन जीते हुए जीवनदाता को पाने का प्रभावशाली मार्गदर्शन किया। सभी आँखों में आध्यात्मिक चमक, मन में पावन प्रसन्नता, बुद्धि में विशेष सूझबूझ का सम्बल लिये धनभागी हुए। पूज्य बापूजी ने कहा : ''खुश रहना चाहिए, निर्भय रहना चाहिए। अपने को निर्गुण, निराकार, चैतन्य मानो। हाड़-मांस के शरीरवाला अपने को मानोगे तो एक भय, विकार या विघ्न जायेगा तो दूसरा आयेगा, दूसरा जायेगा तो तीसरा आयेगा। ये डरा-डराकर तुमको कमजोर कर रहे हैं। तुम चैतन्य हो और प्रतिकूलता जड़ है। तुम शाश्वत हो, सुख-दुःख नश्वर हैं। शाश्वत होकर नश्वर से डरते हो ! शर्म नहीं आती !''

उत्तराखण्ड के बाद हिमाचल प्रदेश में बही सत्संग-अमृतधारा। **२ जून** को **पौंटा साहिब** में व **३ जून** को **नाहन** में सत्संग सम्पन्न हुआ। शरीर में अहंबुद्धि मिटाने की महिमा यहाँ पूज्य बापूजी ने बतायी, बोले : ''एक छोटी-सी सृष्टि में, छोटे-से शरीर में, छोटी-सी 'मैं' में फँसा रहा तो अमीर होते हुए भी कंगाल है और व्यापक ईश्वर की 'मैं' में अपनी 'मैं' मिला दी तो भिखमंगा होते हुए भी

शहंशाहों का निर्माता है, सम्राटों का सम्राट है।''

४ जून को **सोलन** की जनता को कर्मयोग की युक्ति देते हुए पूज्यश्री बोले : ''जीव अपना कर्तव्य ईमानदारी से करता है तो ईश्वर उसके कर्तव्य से संतुष्ट होकर उसे कर्म का बदला कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग प्रदान करने में समर्थ हैं। जीव अगर ममता से कर्म करता है तो बँधता है लेकिन तटस्थ होकर कर्म करता है तो मुक्त होता है।''

५ व ६ जून (सुबह तक) मण्डी में सत्संग-सान्निध्य का लाभ हिमाचल की जनता को मिला। वास्तविक पूजा, उपासना, ज्ञान से अवगत कराते हुए बापूजी ने कहा : ''तुम कहना मानो चाहे न मानो, उसको (ईश्वर को) मानो चाहे न मानो... जो कहते हैं कि भगवान-वगवान नहीं है, वह प्यारा तो उनको भी श्वास देता है, जल देता है, जीवन देता है। अकारण करुणा-वरुणालय जो है वह 'हरि', हर दिल में जो है वह 'हरि'।

भगवान को अपना मानकर शांत होना या अपना मान लेना, यह पूजा हो गयी। सुख-दुःख में सम रहने का प्रयत्न करना, यह उपासना हो गयी। सुख-दुःख का साक्षी होना और 'जो सम है वही मैं हूँ' - ऐसा भाव रखना, यह ज्ञान हो गया।''

६ जून को **कुल्लू, ७ जून** को **नादौन** और **८ व ९ जून कांगड़ा** में बड़ी संख्या में प्रदेशवासियों ने इन लोकलाड़ले संत का दीदार किया और सत्संग-गंगा में अवगाहन कर धन्यता का एहसास किया। सत्संग की आवश्यकता को उजागर करते हुए बापूजी बोले : ''जीव बेचारा आकर्षण से कामी, क्रोधी, लोभी, मोही, चिंतित, अहंकारी बनकर भटक रहा है। अगर इसको सत्संग मिल जाय, युक्ति मिल जाय कि सत्यस्वरूप परमात्मा का रस कैसे मिलता है, परमात्मा का ज्ञान मिल जाय, परमात्मा का रस मिल जाय तो यही जीव सब दुःखों से सदा के लिए छूटकर आत्म-परमात्म वैभव को पाता है।''

कांगड़ा से शाहपुर जाते समय पूज्यश्री ने **नढोली (ज्वाली), जि. कांगड़ा (हि.प्र.)** में नवनिर्मित आश्रम का उद्घाटन किया। **राजा का तालाब (नूरपुर)** के श्रद्धालुओं को भी दर्शन-सत्संग का लाभ मिला।

९ जून को **जुगियाल (शाहपुर कण्डी, पंजाब)** में सत्संग हुआ। **९ जून** की रात पूज्यश्री **कठुआ (जम्मू-कश्मीर)** पहुँचे। **१० जून (सुबह) कठुआ**वासियों को पूज्य बापूजी के सत्संग-सान्निध्य का लाभ प्राप्त हुआ।

१० जून को ही **धमयाल, कूटा, टपयाल** इन स्थानों के आश्रमों में तथा **रामगढ़** के नवनिर्मित आश्रम में पूज्यश्री पहुँचे। **११ जून** को रामगढ़ से जम्मू जाते समय पूज्यश्री का पदार्पण **बिश्नाह** के नवनिर्मित आश्रम में हुआ।

११ से १३ जून (दोपहर) तक **जम्मू** में हुए सत्संग-आयोजन में विशाल जनमेदिनी उमड़ पड़ी थी। लम्बे अंतराल के बाद अपने शहर में प्यारे गुरुदेव के दर्शन का अवसर पाने जम्मू व आसपास के इलाके से बड़ी संख्या में श्रद्धालु आ पहुँचे। आयें भी क्यों न, सत्संग से बिगड़ी बाजी जो सुधर जाती है ! पाप-ताप-संताप मिटकर प्रभुभक्ति के गीत गूँजने लगते हैं। बापूजी ने भी कहा : ''आग की एक चिनगारी ले लो और पुरानी घास में फूँकते रहो तो सूखी घास चाहे दस किलो हो, चाहे सौ किलो हो, हजार किलो हो, दस हजार किलो हो, लाख किलो हो, दस लाख किलो हो, चाहे १० करोड़ किलो हो, एक चिनगारी काफी है। ऐसे ही पाप-संताप और दुःख के बड़े-बड़े पहाड़ क्यों न हों, भगवन्नाम का आश्रय और सत्संग की चिनगारी काफी है।

बिगरी जनम अनेक की सुधरै अबहीं आजु।
होहि राम को नाम जपु तुलसी तजि कुसमाजु॥''

१३ (शाम) से १५ जून (दोपहर) तक फरीदाबाद (हरि.) में पूर्णिमा-दर्शन सत्संग

महोत्सव आयोजित हुआ, जहाँ लाखों की संख्या में पूनम व्रतधारी और विभिन्न राज्यों की जनता ने गुरुदर्शन, सत्संग का लाभ लिया । घट-घट में मौजूद उस परम तत्त्व का ज्ञान उपस्थितों के दिल में भरते हुए पूज्य बापूजी बोले : ''जन्म से पहले और मृत्यु के बाद जो रहता है और अनंत ब्रह्माण्डों में जो सर्वोपरि सत्व व्याप रहा है, जो देवों को देवत्व देता है, ऋषियों को ऋषित्व देता है, बुद्धिमानों की बुद्धि का अधिष्ठान है, न्यायप्रिय व्यक्तियों की बुद्धि का सत्व है, वह परमेश्वर अपना आत्मा बनकर बैठा है ।

हम अपनी करनी से उस परमेश्वर के नजदीक हो जाते हैं और अपनी गड़बड़ से परमेश्वर से दूर हो जाते हैं ।

करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ।

वास्तव में परमेश्वर हमसे दूर नहीं होते, हम अपनी मति-गति से दूर जैसा आचरण करके दूर हो जाते हैं ।''

१५ (शाम) से १७ जून (दोप.) तक **अहमदाबाद (गुज.)** में पूर्णिमा-दर्शन का लाभ देश भर से आये श्रद्धालुओं ने लिया । पूनम व्रतधारियों को सम्बोधित करते हुए पूज्यश्री ने कहा :

''बड़ी आपदा और बड़ी उपलब्धि के बीच जैसे आम आदमी हिल जाता है, डिग जाता है, वैसे व्रत-नियम को जाननेवाले नहीं डिगते ।

तुच्छ-से-तुच्छ आदमी भी अगर वासना मिटाने के रास्ते ले जानेवाले सत्संग को पकड़ लेता है तो देखते-देखते वह महान हो जाता है ।''

वासनापूर्ति की गुलामी को छोड़कर आत्मलाभ की तरफ ले जानेवाला सत्संग यहाँ साधकों को मिला । पूज्यश्री ने कहा : ''आवश्यकता आसानी से पूरी होती है । वासनापूर्ति के लिए तो प्रारब्ध चाहिए, हेराफेरी भी चाहिए, कूड़-कपट भी चाहिए, चिंतन भी चाहिए, फिर भी एक वासना पूरी होती है तो दूसरी बन जाती है । वासना पूरी करके कोई पूरा सुखी हुआ हो ऐसा नहीं है, वासना निवृत्त होकर परम सुखी हो गया हो ऐसा है । वासनावान तो बड़े-बड़े नरकों में पड़ते हैं ।'' ❐

विशेष सूचना

गुरुपूर्णिमा महापर्व के अवसर पर अहमदाबाद आश्रम आनेवाले भक्तों के लिए अहमदाबाद (कालूपुर) रेलवे स्टेशन से आश्रम आने-जाने हेतु १४ से १८ जुलाई तक वाहन-व्यवस्था की गयी है । यह सुविधा प्लेटफार्म नं. १ के बाहर हनुमान मंदिर के पासवाले गेट से होकर सड़क पार करके सामने की तरफ उपलब्ध रहेगी ।

सम्पर्क : ९८२४५४८५७१, ९४२९२०९१७०, ९६३८१०५२९१, ९१३७३१३०३९.

* पूज्य बापूजी के सान्निध्य में 'गुरुपूर्णिमा-महोत्सव' *

दिनांक	स्थान	सत्संग-स्थल	सम्पर्क
५ जुलाई (शाम से)	हैदराबाद (आं.प्र.)	N.T.R. स्टेडियम, इंदिरा पार्क के सामने	९३९१०१०४६८, ९२४६१६३९०२.
६ व ७ जुलाई	बैंगलोर (कर्नाटक)	बैंगलोर पैलेस ग्राउंड (गायत्री विहार) मेखरी सर्कल के पास	०८०-३२५३३८३३, ९८४५५४६०६५, ९९६४३५४५३६.
८ व ९ जुलाई	पुणे (महा.)	संत श्री आशारामजी आश्रम, आलंदी (पुणे)	९८५०११८६३३, ९३२६०५००४३
१३ व १४ जुलाई	दिल्ली	सेक्टर-११, मेट्रो स्टेशन के पास, द्वारका	९८१०९५९६९६, ९८९१३६७७१७.
१५ से १७ जुलाई	अहमदाबाद (गुज.)	अहमदाबाद आश्रम	०७९-३९८७७७८८, २७५०५०१०/११.

२३ व २४ जून चंडीगढ़, २६ (शाम) से २७ जून तक रायपुर (छ.ग.), १ व २ जुलाई उज्जैन (म.प्र.) तथा ३ जुलाई को भोपाल (म.प्र.) में पूज्य बापूजी का सत्संग एवं 'गुरुपूर्णिमा महोत्सव' सम्पन्न हुआ ।

बापूजी के बच्चे, नहीं रहते कच्चे !

अहमदाबाद, आगरा, भोपाल, इंदौर व जयपुर गुरुकुलों में १०वीं बोर्ड की परीक्षा में शत-प्रतिशत विद्यार्थी उत्तीर्ण

गत वर्ष की तरह इस वर्ष भी बोर्ड की दसवीं की परीक्षाओं में गुरुकुल के विद्यार्थियों ने उत्तम सफलता प्राप्त कर इस तथ्य की पुष्टि कर दी है कि गुरुकुलों में उच्च संस्कार-सिंचन और आध्यात्मिक उन्नति तो होती ही है, साथ ही ऐहिक शिक्षा जगत की उच्चतम ऊँचाइयाँ पाना भी उनके लिए सुगम हो जाता है।

पूज्य बापूजी से मंत्रदीक्षा में प्राप्त सारस्वत्य मंत्र का जप, गुरुकुल का सात्त्विक-संयमी जीवन और समय-समय पर पूज्य गुरुदेव का सत्संग-सान्निध्य व मार्गदर्शन - यही है इन विद्यार्थियों की सफलता का रहस्य !

संत श्री आशारामजी गुरुकुलों की छत्रछाया में विकसित हो रहे पुष्प

हिमानी चौधरी, आगरा
10/10 CGPA

पार्थ कटारा, अहमदाबाद
99.49 Percentile

देशना शेरके, छिंदवाड़ा
94% Dist. Topper

बरखा सैनी, छिंदवाड़ा
94% Dist. Topper

उज्ज्वल भारद्वाज, आगरा
9.8/10 CGPA

शुभम वर्मा, अहमदाबाद
97.56 Percentile

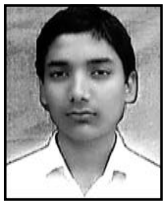
अनिकेत कुमार, जयपुर
9.6/10 CGPA

अनंत पटेल, अहमदाबाद
95.05 Percentile

प्रसून प्रसाद कांत, आगरा
9.4/10 CGPA

उमेश कुमार, आगरा
9.4/10 CGPA

1. आगरा गुरुकुल (सी.बी.एस.ई. बोर्ड) की छात्रा कु. हिमानी चौधरी - 10/10 CGPA, 7 विद्यार्थियों का CGPA - 9.0 से ऊपर, 99% विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में !
2. छिंदवाड़ा गुरुकुल (मध्य प्रदेश बोर्ड) की दो छात्राओं - कु. बरखा सैनी और कु. देशना शेरके ने 94% अंक पाकर जिले में संयुक्त रूप से प्रथम स्थान प्राप्त किया। यहाँ 83% विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में !
3. गुजरात बोर्ड के अहमदाबाद गुरुकुल में प्रथम स्थान प्राप्त करनेवाले पार्थ कटारा के 99.49% परसेंटाइल रैंक, गणित में 100/100. एक-तिहाई छात्रों के 90 से ऊपर परसेंटाइल रैंक। यहाँ 90% विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में !

अहमदाबाद, आगरा, भोपाल, छिंदवाड़ा, जयपुर, रायपुर, इंदौर, धुलिया, राजकोट, सूरत, जम्मू, काशी, लुधियाना आदि स्थानों पर चल रहे संत श्री आशारामजी गुरुकुलों में सभी विषयों (विशेषकर गणित एवं विज्ञान) के लिए पूज्य बापूजी से मंत्रदीक्षित अनुभवी शिक्षकों की आवश्यकता है। अपेक्षित शैक्षणिक योग्यता - एम.ए. / एम.कॉम. / एम.एससी. के साथ बी.एड.। अनुभव एवं योग्यतानुसार वेतन दिया जायेगा। दीक्षित साधक दीक्षा का प्रमाण देने में सफल होंगे तो उनको प्राधान्य दिया जायेगा। इच्छुक साधक अपना बायोडाटा एवं फोटो तथा दीक्षा के दिनांक व स्थान की जानकारी सहित आवेदन-पत्र निम्न पते पर भेजें अथवा ई-मेल (gurukul@ashram.org) या फैक्स (079-27505012) करें :

पता : गुरुकुल केन्द्रीय प्रबंधन समिति, संत श्री आशारामजी आश्रम, मोटेरा, अहमदाबाद (गुज.)
फोन : 079-39877787/88. www.gurukul.ashram.org